कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

वर्ष 61 अंक : 09 पृष्ठ : 52 जुलाई 2015 मूल्यः ₹10

ग्रामीण स्वास्थ्य

स्वास्थ्य के क्षेत्र में नई पहल

- नवजात शिशुओं की मौतों को रोकने के लिए सितंबर 2014 से भारत नवजात कार्ययोजना (आई.एन.ए.पी.) की शुरुआत। मौजूदा समय में प्रति एक हजार जन्म में नवजात शिशुओं की मृत्युदर 28 है। आई.एन.ए.पी. का लक्ष्य 2030 तक इस मृत्युदर को पूरी तरह से रोकना है।
- समय–पूर्व जन्म लेने वाले और बीमार नवजातों की उचित देखभाल के लिए कंगारू मातृ देखभाल (केएमसी) कार्यक्रम। इस कार्यक्रम से करीब पांच लाख नवजातों को मौत के मुंह से बचाया जा सकता है।
- आंशिक टीकाकरण या इससे पूरी तरह वंचित बच्चों को लाभ पहुंचाने के उद्देश्य से 25 दिसंबर, 2014 को 'मिशन इन्द्रधनुष' की शुरुआत। मिशन इन्द्रधनुष सात बीमारियों (डिप्थीरिया, पोलियो, टीबी, खसरा, काली खांसी, टिटनेस और हेपेटाइसिस 'बी') के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करेगा। सन् 2020 तक हर बच्चे को टीकाकरण के दायरे में लाने का लक्ष्य।
- सभी गर्भवती महिलाओं को समय पर प्रसव–पूर्व तथा प्रसव के बाद की सेवाएं प्रदान करने तथा सभी बच्चों के टीकाकरण के लिए सभी राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों में एक वेबप्रणाली मदर एंड चाइल्ड ट्रैकिंग सिस्टम (एमसीटीएस) लागू। वर्ष 2010 से लागू इस कार्यक्रम के तहत् अब तक 2.24 लाख सहायक नर्स मिडवाइफ (एएनएम) और 9.31 लाख मान्यता प्राप्त सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं (आशा) द्वारा कुल 14 करोड़ से भी ज्यादा गर्भवती महिलाओं का एमसीटीएस में पंजीकरण।
- एमसीटीएस को सहायक तंत्र उपलब्ध कराने और उसकी निगरानी एवं प्रभावशीलता की जांच के लिए मदर एंड चाइल्ड ट्रैकिंग फैसिलिटेशन सेंटर (एमसीटीएफसी) स्थापित। मातृ–शिशु को दी जाने वाली स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के तहत उठाया गया यह एक बड़ा कदम है।
- 'किलकारी' के नाम से एक आईवीआरएस आधारित एप्लीकेशन पायलट तौर पर शुरू की गई है जिसके तहत् मातृ–शिशु स्वास्थ्य सेवाओं से संबंधित ऑडियो संदेश गर्भवती महिलाओं और शिशु के माता–पिता को भेजे जा रहे हैं। एक अन्य आईवीआरएस आधारित एप्लीकेशन 'मोबाइल अकादमी' को भी आशा और एएनएफ कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए जांचा–परखा जा चुका है। इन एप्लीकेशनों को 15 अगस्त, 2015 को राष्ट्रीय–स्तर पर लांच किया जाना प्रस्तावित है।
- टीकाकरण से रोकी जा सकने वाली बीमारियों से बच्चों को बचाने के मकसद से नए टीकों को शामिल करने की योजना। इनमें सुप्त पोलियो, जापानी एंसेफेलाइटिस, रोटावायरस और खसरा रुबेला के टीके शामिल हैं। सुप्त पोलियो टीके को अक्तूबर 2015 से व्यापक प्रतिरक्षण कार्यक्रम में शामिल किया जाएगा जिससे हर साल 2.7 करोड़ बच्चे लाभान्वित होंगे।
- कुल 29 राज्यों और संघशासित प्रदेशों में माताओं और नवजातों में टिटनेस के उन्मूलन कार्यक्रम (एमएनटीई) को मंजूरी मिल चुकी है। एमएनटीई के तहत टिटनेस से होने वाली नवजात शिशुओं की मृत्युदर में कमी लाना है।
- निमोनिया और दस्त के लिए समेकित कार्ययोजना (आईएपीपीडी) शुरू। निमोनिया और दस्त से होने वाली बाल मृत्युदर पर रोक लगाने के मकसद से ये कार्ययोजना अभी चार राज्यों, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश और राजस्थान में शुरू की गई है।
- 'स्वच्छ भारत, स्वस्थ भारत' के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए 2 अक्तूबर, 2014 को 'स्वच्छ भारत' अभियान की शुरुआत। इस अभियान का उद्देश्य 2019 को महात्मा गांधी की 150वीं वर्षगांठ तक देश को खुले में शौच से मुक्त करना है जिससे गांवों में डायरिया, बुखार और गंदगी से फैलने वाली अन्य बीमारियों पर काबू पाया जा सकेगा।
- स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी विशेषकर इंटरनेट के अधिकतम लाभ लेने के लिए राष्ट्रीय ई–स्वास्थ्य प्राधिकरण (एन.ई.एच.ए) की स्थापना का प्रस्ताव। 20 अप्रैल, 2015 को स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय ने प्रस्तावित ई–स्वास्थ्य प्राधिकरण की परिकल्पना और अवधारणा का ब्यौरा केन्द्र सरकार के विचारार्थ जारी कर दिया है।

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 61 ★ मासिक अंक : 09 ★ पृष्ठ : 52 ★ आषाढ़–श्रावण 1937★जुलाई 2015

प्रधान संपादक
दीपिका कच्छल
वरिष्ठ संपादक
कैलाश चन्द मीना
संपादक
ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
वरिष्ठ संपादक,
कमरा नं. 655, प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स,
लोधी रोड, नई दिल्ली–110003
दूरभाष : 24365925
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक
विनोद कुमार मीना
व्यापार प्रबंधक
सूर्यकांत शर्मा
दूरभाष : 011–24365609, फैक्स : 24365610
ई–मेल : pdjucir@gmail.com

आवरण
आशा सक्सेना
सज्जा
आशीष कण्ठवाल

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
सार्क देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

ग्रामीण स्वास्थ्य और नई स्वास्थ्य नीति — ऋषभ कृष्ण सक्सेना — 5

स्वास्थ्य सुविधाओं और चिकित्सा तंत्र के ई-कायाकल्प की ओर — बालेन्दु दाधीच — 09

मातृ-शिशु देखभाल की दिशा में नए प्रयास — सुधीर तिवारी — 12

सेहत सुधरेगी तो चमकेगी तकदीर — पार्थिव कुमार — 19

भारत में औषधि मूल्य नियंत्रण प्रणाली — इंजेटी श्रीनिवास — 22

आदिवासियों की सेहत सुधारना सरकार की प्राथमिकता — धनजी चौरसिया — 27

ग्रामीण भारत में स्वास्थ्य योजनाएं एक आकलन — ऋतु सारस्वत — 30

ग्रामीण स्वास्थ्य और आयुष — ममता रानी — 33

स्वच्छ भारत, स्वस्थ भारत — संजय श्रीवास्तव — 37

ग्रामीण जनता की प्रगति में बाधक फ्लोरोसिस रोग — डॉ. दुर्गादत्त ओझा — 42

मलेरिया : ग्रामीण समाज के लिए एक बड़ी चुनौती — डॉ अर्चना द्विवेदी — 46

महिलाओं की जिंदगी संवारने की मुहिम — संगीता यादव — 48

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से संपर्क करें। दूरभाष : 011–24365609, फैक्स : 24365610

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो। पाठकों से आग्रह है कि कैरियर मार्गदर्शक किताबों/संस्थानों के बारे में विज्ञापनों में किए गए दावों की जांच कर लें। 'कुरुक्षेत्र' पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषय–वस्तु के लिए उत्तरदायी नहीं है।

संपादकीय

इसमें कोई संदेह नहीं है कि देश के समग्र सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए स्वास्थ्य एवं मानवीय विकास एक बुनियादी आवश्यकता है क्योंकि स्वस्थ नागरिक ही एक स्वस्थ एवं मजबूत राष्ट्र का निर्माण कर सकता है।

स्वाधीनता के बाद से ही देश के सामने जो लक्ष्य रहे हैं, उसमें 'स्वास्थ्य' प्रमुख रहा है। 'सभी को स्वास्थ्य' देने के लिए जो प्रयास किए गए उससे शहरों में तो बड़े–बड़े अस्पताल बने लेकिन देश की ग्रामीण जनता तक स्वास्थ्य सुविधाओं की पहुंच जरूरत से बहुत कम रही।

आज देश में चेचक, प्लेग जैसी महामारियां नहीं फैलती हैं। यही नहीं देश को पोलियोमुक्त भी कर लिया गया है। पिछले चार वर्षों से अधिक समय 13 जनवरी, 2011 से देश में पोलियो का एक भी मामला सामने नहीं आया जोकि बेहद उत्साहजनक तथ्य है।

भारत के संविधान के सातवें अनुच्छेद के तहत जन स्वास्थ्य राज्य सरकारों का दायित्व है। हालांकि केन्द्र सरकार स्वास्थ्य देखभाल के लिए वित्तीय तथा तकनीकी सहायता उपलब्ध कराती है। भारत में स्वास्थ्य क्षेत्र की चुनौतियां विविध एवं व्यापक हैं। संक्रामक रोग खासतौर से टी.बी. ग्रामीण भारत में बीमारियों का बोझ बढ़ाने में सबसे आगे हैं। दूषित जलजनित बीमारियां हैजा, निमोनिया भी गांवों में बड़े पैमाने पर मौतों के लिए जिम्मेदार हैं। साथ ही डायबिटीज, कैंसर, एड्स, और मानसिक बीमारियां भी अपना जोर दिखाती रहती हैं। आदिवासी समुदाय तक स्वास्थ्य सुविधाएं पहुंचाना एक अलग चुनौती है चूंकि उनके रीति–रिवाज उसमें आड़े आते हैं। खासतौर से बच्चे की जन्म के समय उनके रिवाज बड़े पैमाने पर जच्चा–बच्चा की मौत का कारण बनते हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रतिरक्षण और अन्य बाल स्वास्थ्य देखभाल सुविधाओं में सुधार के कारण भारत में शिशु मृत्युदर और पांच वर्ष से कम आयु के शिशु की मृत्यु दर में निरंतर कमी आ रही है।

डब्ल्यूएचओ के 2012 के आंकड़ों के अनुसार प्रत्येक वर्ष पांच वर्ष से कम आयु के शिशुओं की मृत्यु में 11 प्रतिशत की मृत्यु डायरिया के कारण होती है। यह भी अनुमान लगाया गया है कि डायरिया के कारण होने वाली मृत्यु में 90 प्रतिशत को ओरल डिहाइड्रेशन सॉल्ट, ओआरएस और जिंक की गोलियों के प्रयोग द्वारा आसानी से तथा प्रभावी ढंग से कम किया जा सकता है। यह उपचार डब्ल्यूएचओ द्वारा अनुमोदित हैं।

एक अनुमान के अनुसार यदि स्वच्छ पेयजल और बेहतर सफाई व्यवस्था मुहैया कराई जाए तो प्रत्येक 20 सेकेंड में एक बच्चे की जान बचाई जा सकती है। आधारभूत सुविधाओं में सुधार कर गरीबी और बीमारियों को 80 फीसदी तक कम किया जा सकता है। साथ ही, बढ़ती शिशु मृत्युदर को भी तेजी से घटाया जा सकता है। गौरतलब है कि संयुक्त राष्ट्र मिलेनियम विकास लक्ष्य 2015 के तहत शिशु मृत्युदर को भी करीब दो तिहाई की दर तक कम करने का लक्ष्य रखा गया है।

सरकार ने सितंबर 2015 तक संयुक्त राष्ट्र मिलेनियम विकास लक्ष्य 2015 को पूरा करने के लिए प्रतिबद्धता जताई है और इसके लिए कई कदम उठाए गए हैं। पांच साल की कम उम्र के 20 से 35 फीसदी बच्चों तक जिंक अनुपूरक और ओआरएस उपचार की उपलब्धता पहुंचाने का लक्ष्य है जो अभी केवल 5 प्रतिशत है। ऐसा करने से हर साल हजारों बच्चों की जान बचाई जा सकेगी।

सरकार ने लैंगिक अनुपात सही करने और लड़कियों के स्वास्थ्य की समुचित देखभाल के लिए 'बेटी बचाओ' योजना आरंभ की है। उम्मीद है कि यह योजना बेटियों के स्वास्थ्य निगरानी में भी मददगार होगी।

मई 2015 से बेहद सस्ती प्रधानमंत्री जीवन बीमा योजना और प्रधानमंत्री दुर्घटना बीमा योजना आरंभ की गई है जिससे गांवों के जरूरतमंद लोग भी लाभ उठा पाएंगे। नई स्वास्थ्य नीति 2015 का मसौदा जारी कर दिया गया है। शीघ्र ही अंतिम नीति जारी की जाएगी। सरकार की स्वास्थ्य पर सार्वजनिक व्यय को बढ़ाकर जीडीपी के 2.5 प्रतिशत तक लाने की महत्वाकांक्षी योजना है।

सरकार स्वास्थ्य को 'मौलिक अधिकार' का दर्जा देने की भी इच्छुक है और इस दिशा में प्रयास भी शुरू कर दिए हैं। साथ ही, सरकार का जोर 'बीमारी की देखभाल' की जगह 'स्वास्थ्य देखभाल' पर है। इसी दिशा में कदम बढ़ाते हुए सरकार 'आयुष' प्रणालियों पर जोर दे रही है। सरकार का मानना है कि ग्रामीण अंचलों की स्वास्थ्य समस्याएं एलोपैथ की बजाए आयुर्वेद और होम्योपैथी जैसी प्रणालियों द्वारा सरलता से ठीक की जा सकती है। गांवों में जिस तरह की बीमारियां फैलती हैं उनमें से अधिकांश कुछेक परहेजों से और स्वच्छता से रोकी जा सकती हैं।

गांवों में टीबी से बड़ी संख्या में लोग असमय ही मौत के शिकार हो जाते हैं। टीबी की रोकथाम के लिए सरकार ने तम्बाकू उत्पादों की बिक्री से संबंधित नियमों को सख्त बनाया है। उम्मीद है कि इससे तम्बाकू सेवन में कुछ हद तक कमी आएगी। साथ ही सरकार ने टीबी मुक्त भारत के लिए कार्य करने के आह्वान कार्यक्रम की शुरुआत की है। जल्दी ही टीबी के सभी संदिग्ध मरीजों के परामर्श और उपचार के लिए टोल फ्री नम्बर भी शुरू कर दिया जाएगा।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि स्वास्थ्य शिक्षा से अधिक से अधिक बीमारियां होने से रोकी जा सकती हैं। इससे न केवल सरकार बल्कि जनता के भी पैसों की बचत हो सकती है। साफ–सफाई के बारे में जागरुकता और खुले में शौच से मुक्त देश बनाने की कवायद से कई बीमारियों से बचा जा सकता है। स्वच्छ पेयजल की उपलब्धता भी ''सभी को स्वास्थ्य'' के लक्ष्य को हासिल करने की दिशा में बेहद कारगर साबित हो सकती है।

ग्रामीण स्वास्थ्य और नई स्वास्थ्य नीति

—ऋषभ कृष्ण सक्सेना

ग्रामीण भारत यूं तो कई तरह की समस्याओं से जूझता रहता है, लेकिन स्वास्थ्य सेवाओं की कमी सबसे ज्यादा खलती है। डॉक्टरों की किल्लत हो या अस्पतालों की कमी या लोगों के बीच जागरुकता का अभाव, ग्रामीण स्वास्थ्य ढांचा दिक्कतों से घिरा रहा है। एनआरएचएम जैसे विभिन्न कार्यक्रम इसमें एक सीमा तक ही सुधार कर सके हैं। लेकिन केंद्र सरकार की नई स्वास्थ्य नीति 2015 इसमें आमूलचूल परिवर्तन का वायदा करती दिखती है बशर्ते उसमें कुछ सुधार किए जाएं और प्रभावी तरीके से उसे लागू किया जाए।

जब स्वास्थ्य की बात आती है तो किसी भी देश या उसकी सरकार का गंभीर होना लाजिमी है क्योंकि आर्थिक दबदबे के इस दौर में सेहतमंद श्रमशक्ति यानी कामगार सबसे ज्यादा अहम हैं। अगर श्रमशक्ति का अधिकतर हिस्सा बीमार रहता है तो उससे काम के घंटे बर्बाद होते हैं और उत्पादकता पर गहरी चोट होती है, जिसका नतीजा आर्थिक विकास में कमी की शक्ल में सामने आता है। यही वजह है कि तमाम विकसित और विकासशील देश अपनी जनता के स्वास्थ्य पर खास ध्यान देते हैं। कई देशों ने तो इसे बाकायदा मौलिक अधिकार की तरह तवज्जो देना शुरू कर दिया है। लेकिन यह विडंबना ही है कि आजादी मिलने के करीब 68 वर्ष बाद भी भारत 'सबको स्वास्थ्य सेवा' देने के अपने मकसद में कामयाब नहीं हो पाया है। इसकी वजह साफ है – या तो सरकारों ने सेहत को हाशिये पर डाल दिया या ध्यान दिया, लेकिन उसके लिए शुरू हुई तमाम योजनाएं भ्रष्टाचार या प्रशासनिक ढिलाई की भेंट चढ़ गईं। इसका सबसे बड़ा खमियाजा हमारे गांवों को भुगतना पड़ा है।

ग्रामीण भारत में स्वास्थ्य

भारत में लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में रहती है, लेकिन सेंट्रल ब्यूरो ऑफ हेल्थ इंटेलिजेंस की 2013 की रिपोर्ट के अनुसार सरकार द्वारा नियुक्त किए गए बमुश्किल 33 प्रतिशत डॉक्टर ही वहां काम करते हैं। उनमें भी ज्यादातर कस्बों में काम करते हैं। इसकी वजह से ग्रामीणों को स्वास्थ्य की प्राथमिक सुविधा भी नहीं मिल पाती है। इसलिए तमाम कार्यक्रमों के बावजूद आज गांवों में स्वास्थ्य सेवा बेहद कम है और उसमें गुणवत्ता तो दिखती ही नहीं है। गांवों की उपेक्षा का ही नतीजा है कि वहां मौत भी अधिक संख्या में होती हैं। वर्ष 2012 के सरकारी आंकड़ों के अनुसार शहरों में प्रति एक लाख नवजात शिशुओं में केवल 27 की मौत होती थी, लेकिन गांवों में यही आंकड़ा 44 यानी 63 प्रतिशत अधिक था। इन आंकड़ों से ही अंदाजा लगाया जा सकता है कि भारत में और विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा सुविधा की कैसी हालत है।

हालांकि संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (संप्रग) सरकार ने 2005 में राष्ट्रीय

ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम) आरंभ किया था। इसका अच्छा–खासा असर दिखा। इसके तहत देश में करीब 9 लाख सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं और आशाकर्मियों की फौज खड़ी हुई, जिसने ग्रामीण क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इससे स्वास्थ्य सेवा में करीब 1.78 लाख नए कर्मचारी जुड़े और एक बड़ी आबादी को चिकित्सा की सुविधा मिली। लेकिन नीति का मसौदा ही बताता है कि सक्षम राज्यों में इसका अधिक लाभ हुआ और दूसरे राज्य इसके तहत मिले धन को बुनियादी ढांचे में नहीं बदल सके। इसलिए बदलते समय और स्वास्थ्य क्षेत्र की बदलती सूरत के बीच एनआरएचएम में भी बदलाव की जरूरत महसूस होती है।

स्वास्थ्य नीति से उम्मीद

नई सरकार स्वास्थ्य के मसले पर अधिक गंभीर दिखाई दे रही है। पिछले साल मई में देश की कमान हाथ में लेने के बाद नरेंद्र मोदी सरकार ने सबको स्वास्थ्य सुविधा मुहैया कराने के अपने अभियान के तहत कई तरह के कदम उठाए हैं और अब वह नई स्वास्थ्य नीति भी पेश करने जा रही है। नई स्वास्थ्य नीति का मसौदा पहले ही जारी हो चुका है और तमाम पक्ष उस पर अपनी राय भी दे चुके हैं। उम्मीद है कि जल्द ही अंतिम नीति जारी कर दी जाएगी।

हालांकि इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि भारत का आकार बड़ा होने और आबादी बहुत ज्यादा होने के कारण यहां स्वास्थ्य सेवा का क्षेत्र चुनौतियों से भरा पड़ा है। लेकिन यह भी सच है कि सही मंशा से काम हो तो चुनौतियों से निपटा जा सकता है। पिछली राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति (2002) के लगभग 13 वर्ष बाद आई राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 2015 का मसौदा तो कम से कम यही कहता है कि सरकार की मंशा बहुत सधी हुई है। शायद यह पहला मौका है, जब सरकार स्वास्थ्य क्षेत्र को न तो अपने पास रख रही है और न ही पूरी तरह निजी क्षेत्र के हवाले कर रही है। इस बार सरकार स्वास्थ्य के क्षेत्र में निजी क्षेत्र की और अपनी भूमिका को साफतौर पर परिभाषित कर रही है। इतना ही नहीं, सरकार अपनी भूमिका का दायरा भी बढ़ा रही है।

इस नीति में सबसे महत्वपूर्ण बात है स्वास्थ्य को मौलिक अधिकार का दर्जा देना। यदि ऐसा होता है तो सरकार की विभिन्न महत्वपूर्ण योजनाएं स्वास्थ्य सेवा को केंद्र में रखकर बनाई जाने लगेंगी। जो योजनाएं पहले से मौजूद हैं, उन्हें अधिक सक्षम भी बनाया जाएगा क्योंकि मौलिक अधिकार की रक्षा करना सरकार का कर्तव्य है।

दूसरी महत्वपूर्ण बात है, स्वास्थ्य सेवाओं पर सरकारी खर्च को बढ़ाकर सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के 2.5 प्रतिशत (अभी केवल 1.2 प्रतिशत) तक ले जाने की महत्वाकांक्षी योजना। यह आसान तो बिल्कुल भी नहीं होगा। अमेरिका अपने जीडीपी का लगभग 8.5 प्रतिशत स्वास्थ्य सेवा पर खर्च करता है। ब्राजील के मामले में यही आंकड़ा 4.2 प्रतिशत है और चीन में 2.7 प्रतिशत है। आलम यह है कि 1.6 प्रतिशत के साथ श्रीलंका और 1.4 प्रतिशत के साथ बांग्लादेश भी इस मामले में हमसे आगे है। ऐसे में खर्च को बढ़ाकर 2.5 प्रतिशत करना महत्वाकांक्षी लेकिन बहुत जरूरी है।

यह खर्च बढ़ने से स्वास्थ्य सेवा का बुनियादी ढांचा बहुत सुधर जाएगा। इसका प्रभाव गांवों में भी दिखने की उम्मीद है, जहां बेहतर अस्पताल बनेंगे और चिकित्साकर्मियों की कमी भी काफी हद तक कम कर दी जाएगी। लेकिन असली फायदा तभी होगा, जब इसमें मुफ्त दवा और मुफ्त रोग जांच जैसे खर्च भी शामिल कर लिए जाएं। ग्रामीण क्षेत्र के लिहाज से ये दोनों इसलिए भी अहम हैं क्योंकि आधुनिक उपचार आसानी से उपलब्ध नहीं होने के कारण वहां मृत्यु दर ज्यादा होती है। लेकिन स्वास्थ्य नीति का मसौदा इस मामले में उम्मीद की नई किरण दिखा रहा है।

प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं पर नीति में काफी ध्यान दिया गया है जो ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अच्छा रहेगा। दरअसल मौजूदा ढांचे से प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा की बमुश्किल 20 प्रतिशत जरूरतें पूरी हो पाती हैं। नई नीति में इसका दायरा बढ़ाने का प्रस्ताव है और इसमें जच्चा–बच्चा की सेहत, संक्रामक तथा असंक्रामक रोगों को भी शामिल करने की बात कही गई है। इसे अमलीजामा पहनाया जाता है तो गांव–देहात का भला हो सकता है क्योंकि अभी वहां प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों का मतलब मामूली दवाओं की पुड़िया पकड़ाना या इंजेक्शन लगाना ही है। अगर सरकार की मंशा के मुताबिक वहां गंभीर बीमारियों का भी इलाज होने लगता है तो मरीजों को शहर तक जाने की जरूरत ही नहीं पड़ेगी और बड़े अस्पतालों में भी भीड़ कम हो जाएगी। इससे पैसे की भी अच्छी–खासी बचत होगी। इसमें ग्राम स्वास्थ्य, स्वच्छता एवं पोषण समितियों को जोड़ने से ग्रामीणों में जागरुकता भी बढ़ेगी।

आयुष (आयुर्वेद, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध एवं होम्योपैथिक पद्धतियां) सेवाओं पर भी इस सरकार का खासा जोर है, जो गांव–देहात में ज्यादा प्रभावी साबित हो सकती हैं। एनआरएचएम के जरिए इसे काफी विस्तार दिया गया है। लेकिन इसमें अभी काफी कुछ किया जा सकता है। आदिवासी इलाकों में अक्सर जड़ी–बूटियों के जरिए इलाज के नुस्खे होते हैं, जो आसानी से सुलभ होते हैं। सरकार को शोध के जरिये इनकी उपचार क्षमता में इजाफे की कोशिश करनी चाहिए ताकि हाशिये

पर पड़े वर्गों को सामान्य रोगों के उपचार बेहद सस्ती दवाओं के जरिये मिल जाएं।

कम आय वाले तबके को सरकार अभी तक सस्ती या मुफ्त चिकित्सा मुहैया कराने के लिए कर से होने वाली आय का सहारा लेती है। लेकिन अब सरकार निजी क्षेत्र के साथ मिलकर मुफ्त सुविधाएं देगी, जिसमें जांच, दवा और अस्पताल में भर्ती करने जैसी सेवाएं निजी क्षेत्र मुहैया कराएगा। इसके लिए निजी क्षेत्र के खर्च की पूर्ति सरकार बाद में कर देगी। हालांकि इसके लिए भी सरकार को बुनियादी ढांचा मुस्तैद करना होगा ताकि निजी क्षेत्र गांव–देहात में सुविधाएं देने के लिए तैयार रहे।

लेकिन कुछ मुद्दे बरकरार

स्वास्थ्य नीति में ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों के लिए तमाम बातें सोची गई हैं, लेकिन कुछ सवाल और चिंता अब भी बरकरार हैं। सबसे पहला सवाल तो स्वास्थ्य पर सरकारी खर्च से ही जुड़ा है। सरकार बेशक इसे जीडीपी के 2.5 प्रतिशत तक पहुंचाना चाहती है, सरकार ने पिछले वित्त वर्ष में इसमें 20 प्रतिशत कटौती की और इस बार भी आंकड़ा ऐसा ही रहने की अटकलें लगाई जा रही हैं। सरकार को इस पर अपना रुख स्पष्ट करना होगा। अगर वह खर्च घटाने की इच्छुक है तो उसे इसकी भरपाई के रास्ते स्पष्ट तौर पर सोचने होंगे। भरपाई के लिए स्वास्थ्य उपकर लगाने की बात नीति के मसौदे में कही गई है, लेकिन उसका ढांचा तैयार नहीं किया गया है। वास्तव में इस उपकर को केवल तंबाकू और अल्कोहल पर सीमित रखने के बजाय सरकार जंक फूड और डिब्बाबंद खाने (जिसकी अधिक खपत को नुकसानदेह बताया जाता है) पर भी इसे लगाती है तो उपकर का दायरा भी बढ़ेगा और संग्रह भी। इसके लिए कंपनियों को कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व (सीएसआर) के तहत रकम स्वास्थ्य सेवा में लगाने के लिए कहा जा सकता है।

एक अहम पहलू अस्पतालों और डॉक्टरों की कमी भी है। भारत में लगभग 1700 मरीजों पर एक डॉक्टर उपलब्ध हो पाता है, जबकि दुनिया भर में 1000 मरीजों पर 1.5 डॉक्टर होते हैं। पड़ोसी देश चीन में 1063 मरीजों पर एक डॉक्टर होता है और जर्मनी में तो एक डॉक्टर के जिम्मे केवल 296 मरीज आते हैं। इसकी वजह यह है कि चिकित्सा की पढ़ाई करके डॉक्टर बनने वाले युवा गांवों में जाना ही नहीं चाहते। जाना पड़े तो स्वास्थ्य केंद्र या अस्पताल में रहने के बजाय वे पास के कस्बों या शहरों में अपने क्लिनिक में इलाज करना पसंद करते हैं। इस स्थिति

स्वास्थ्य की दिशा में बढ़ते कदम

पिछले एक वर्ष में केंद्र ने जो भी कदम उठाए हैं और राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 2015 के मसौदे में जिस तरह के प्रस्ताव रखे हैं, उन्हें देखकर लगता है कि स्वास्थ्य के मामले में सरकार सही राह पर चल रही है।

मोदी सरकार की सबसे पहली और बड़ी सफलता 'स्वच्छ भारत अभियान' है, जो वास्तव में स्वास्थ्य की दिशा में पहला कदम है। वर्तमान सरकार की नीतियों के कारण शौचालयों के निर्माण में तो क्रांति ही आ गई है। केंद्र सरकार, राज्य सरकार, निजी क्षेत्र, समाजसेवी संस्थाओं द्वारा मिलकर पहले साल में ही करीब 40 लाख शौचालय बनाए जाने का अनुमान है, जिनका स्वास्थ्य क्षेत्र में दूरगामी प्रभाव पड़ना निश्चित है।

बच्चों के लिए टीकाकरण का 'मिशन इंद्रधनुष' भी इस सरकार की महत्वाकांक्षी योजना है। इसके अंतर्गत सरकार आवश्यक टीकों को समयबद्ध तरीके से लगाने के लिए विशेष प्रयास कर रही है। सरकार ने इसमें कुछ और टीकों को शामिल किया है, जो नए पनपते रोगों से निपटने में काफी प्रभावी सिद्ध होंगे। इसी प्रकार इस सरकार ने 'बेटी बचाओ' योजना आरंभ की है, जो लैंगिक अनुपात सही करने और लड़कियों के स्वास्थ्य की समुचित देखभाल से संबंधित है।

केंद्र सरकार ने मई 2015 में बेहद सस्ती जीवन बीमा योजना और दुर्घटना बीमा योजनाएं भी आरंभ की हैं। बमुश्किल 300 रुपये के एकमुश्त प्रीमियम में 2 लाख रुपये का जीवन बीमा ग्रामीण क्षेत्रों और वंचित वर्गों के लिए बड़ी राहत दे सकता है। उपचार करने में अक्षम लोगों के लिए दुर्घटना बीमा भी सरकार की बहुत उपयोगी योजना है।

सरकार ने आयुष विभाग के माध्यम से पारंपरिक भारतीय चिकित्सा पद्धतियों जैसे आयुर्वेद को पुनर्जीवित करने और प्रसारित करने का भी काम किया है। ग्रामीण क्षेत्रों में यदि अभी अत्याधुनिक अथवा बड़े अस्पताल नहीं हैं और चिकित्सकों की भी कमी है तो वहां आयुर्वेद, यूनानी और होम्योपैथी पद्धतियों से प्रभावी और किफायती उपचार हो सकता है। मोदी सरकार की इस मुहिम का वास्तविक लाभ ग्रामीण क्षेत्रों को ही मिलेगा।

स्वास्थ्य नीति की खास बातें

- स्वास्थ्य पर सार्वजनिक व्यय को बढ़ाकर जीडीपी के 2.5 प्रतिशत तक लाना, जो अभी उसका 1.2 प्रतिशत है।
- शिक्षा के समान स्वास्थ्य को भी मौलिक अधिकार बनाना और उससे वंचित करने पर दंड का प्रावधान होना।
- स्वास्थ्य सेवा पर व्यय को करों की सामान्य वसूली के माध्यम से ही पूरा किया जाएगा।
- शिक्षा उपकर के ही समान स्वास्थ्य उपकर लागू करने की योजना। इसके दायरे में आ सकते हैं तंबाकू और अल्कोहल।
- सार्वजनिक क्षेत्र के साथ ही निजी क्षेत्र की भूमिका पर भी जोर। स्वास्थ्य में सहायक सेवाएं निजी क्षेत्र को ठेके पर देने का प्रस्ताव।
- प्रसव के दौरान जच्चा–बच्चा की मृत्यु की घटनाओं में कमी लाने के प्रयासों पर जोर।
- संक्रामक रोगों पर नियंत्रण पर प्रमुखता से ध्यान।
- असंक्रामक रोगों की बढ़ती संख्या और घटनाओं से निपटने के प्रयास।
- चिकित्सा पर होने वाले खर्च में कमी लाने के प्रयासों पर होगा जोर।
- सरकारी अस्पतालों में सभी को मुफ्त दवाएं और रोग जांच सुविधाएं उपलब्ध कराने का प्रस्ताव।

में बदलाव तभी हो सकता है, जब इस नीति में उनके लिए या तो स्पष्ट प्रोत्साहन हो या दंडात्मक कार्यवाही का प्रावधान हो। सरकार को नीति में इस पर ध्यान रखना होगा।

हालांकि नीति में राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा नीति का दायरा बढ़ाने की बात कही गई है। लेकिन असली समस्या है ग्रामीणों में स्वास्थ्य बीमा के प्रति जागरुकता नहीं होना। वहां ऐसी योजनाएं प्रचलन में ही नहीं हैं। इस वजह से गंभीर बीमारी का इलाज या तो गांव में घर–खेत बिकवा देता है या इलाज न होने की वजह से मरीज की मौत हो जाती है। आंकड़े बताते हैं कि भारत में इलाज की सूरत में औसतन 61.7 प्रतिशत खर्च अपनी जेब से ही करना पड़ता है। इसमें महंगी दवाओं का बहुत बड़ा हाथ रहता है और बीमारियों की जांच भी महंगी ही होती हैं। स्वास्थ्य नीति के मसौदे में ही बताया गया है कि चीन में यह खर्च महज 35.3 प्रतिशत है और श्रीलंका में 44.6 प्रतिशत। ऐसे में स्वास्थ्य बीमा पर सरकार को इस नीति के तहत खास ध्यान देना चाहिए। निजी क्षेत्र को भी अगर सुनिश्चित प्रोत्साहन मिले तो वह ग्रामीण क्षेत्र पर जोर देने लगेगा और अधिक से अधिक आबादी बीमा के दायरे में आ जाएगी।

इसके अलावा अभी तक सरकारी अस्पतालों में जेनेरिक दवाओं का इस्तेमाल काफी होता है, जो सस्ती भी पड़ती हैं। लेकिन सरकार को निजी अस्पतालों में भी प्रभावी जेनेरिक दवाओं का कुछ सीमा तक इस्तेमाल अनिवार्य करना होगा ताकि वहां भी मरीजों की जेब पर कम से कम बोझ पड़े। नीति का मसौदा इस बारे में कुछ नहीं कह रहा है, लेकिन उसे अंतिम रूप देते समय सरकार को इस बात पर ध्यान देना चाहिए।

कुल मिलाकर स्वास्थ्य नीति के मसौदे में सरकार ने अच्छी मंशा दिखाई है और कुछ नए विचार भी इसमें आए हैं। लेकिन बारीकी से देखने पर लगता है कि कई मामलों में स्पष्ट रूपरेखा अभी तक तैयार नहीं की गई है। बेहतर यही होगा कि सरकार इसमें हड़बड़ी दिखाने के बजाय ठोस ढांचा तैयार करने के बाद ही नई नीति लाए ताकि स्वास्थ्य और खासतौर पर ग्रामीण स्वास्थ्य के क्षेत्र में वास्तविक अंतर दिख सकें।

संदर्भ

- राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति, 2015 का मसौदा
- केंद्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार की वेबसाइट
- केंद्रीय बजट 2015–16
- द चैलेंजेज एंड इनोवेटिव सॉल्यूशंस टू रूरल हेल्थ डिलेमा, अशोक पानगड़िया, (एनल्स ऑफ न्यूरोसाइंसेज – अक्टूबर 2014 अंक)
- डिसएडवांटेज्ड रूरल हेल्थ – इश्यूज एंड चैलेंजेजः अ रिव्यू (नेशनल जर्नल ऑफ मेडिकल रिसर्च, जनवरी–मार्च 2013 अंक)
- रिवैंपिंग रूरल हेल्थ प्रोग्राम, डॉ. एच डी द्वारकानाथ (कुरुक्षेत्र, अगस्त 2012 अंक)
- रूरल हेल्थ सिस्टम इन इंडियाः अ रिव्यू, नीलमणि जायसवाल (इंटरनेशनल जर्नल ऑफ सोशल वर्क एंड ह्यूमन सर्विसेज प्रैक्टिस – फरवरी 2015 अंक)

(लेखक आर्थिक दैनिक 'बिजनेस स्टैंडर्ड' में पत्रकार हैं। इससे पहले संवाद समिति 'यूनीवार्ता' में कार्यरत थे। गुरु जंभेश्वर विश्वविद्यालय से संबद्ध मीडिया संस्थानों में अध्यापन कर चुके हैं। इनके लेख विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं।)

ई–मेलः rishabhakrishna@gmail.com

स्वास्थ्य सुविधाओं और चिकित्सा तंत्र के ई-कायाकल्प की ओर

–बालेन्दु दाधीच

जिन देशों ने दूरदराज के क्षेत्रों तक स्वास्थ्य सुविधाएं पहुंचाने के लिए आईटी के इस्तेमाल में तत्परता दिखाई है, उनमें भारत भी शामिल है। ग्रामीण क्षेत्रों तक इंटरनेट की उपलब्धता और मोबाइल उपकरणों के प्रसार ने रोगियों के साथ संपर्क का एक वैकल्पिक किंतु मजबूत माध्यम मुहैया करा दिया है। जिस अंदाज में भारत अपनी राष्ट्रीय ऑप्टिकल फाइबर नेटवर्क की योजना के तहत ढाई लाख गांवों और साठ करोड़ ग्रामीण लोगों तक इंटरनेट कनेक्टिविटी पहुंचाने में जुटा है, उसे देखते हुए यह माध्यम निरंतर प्रभावी होता चला जाएगा।

भारत जैसे विशाल देश में हर व्यक्ति तक चिकित्सा और स्वास्थ्य सुविधाएं पहुंचाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। न सिर्फ दूरियों के लिहाज से बल्कि वातावरण संबंधी भिन्नताओं, आधारभूत सुविधाओं के अभाव, पर्याप्त संख्या में स्वास्थ्य सेवा संसाधनों के उपलब्ध न होने और फिर देश की अत्यंत विशाल जनसंख्या के चलते हर भारतीय नागरिक तक पहुंचना कठिन हो जाता है। ऐसी परिस्थितियों में हमारे जैसे देश के लिए चिकित्सा तथा स्वास्थ्य के क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी और दूरसंचार के इस्तेमाल की अहमियत बढ़ जाती है जिसके लिए भौगोलिक दूरियां कोई मायने नहीं रखती।

जिन देशों ने दूरदराज के क्षेत्रों तक स्वास्थ्य सुविधाएं पहुंचाने के लिए आईटी के इस्तेमाल में तत्परता दिखाई है, उनमें भारत भी शामिल है। ग्रामीण क्षेत्रों तक इंटरनेट की उपलब्धता और मोबाइल उपकरणों के प्रसार ने रोगियों के साथ संपर्क का एक वैकल्पिक किंतु मजबूत माध्यम मुहैया करा दिया है। रोगियों की शारीरिक जाँच और शल्य चिकित्सा जैसे कामों को छोड़ दिया जाए तो ऐसे दर्जनों काम हैं जिनके लिए डॉक्टर के सामने रोगी की प्रत्यक्ष उपस्थिति की जरूरत नहीं होती। मिसाल के तौर पर उनके लक्षणों की जानकारी लेना, इलाज में हो रही प्रगति का विवरण जानना, मरीज के स्वास्थ्य संबंधी रिकॉर्डों को देखना, चिकित्सकों के बीच तालमेल आदि। सूचना प्रौद्योगिकी ने हमारे चिकित्सा संस्थानों के आधुनिकीकरण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। टेलीमेडिसिन, चिकित्सकीय पर्यटन, चिकित्सा सुविधाओं के स्वचालन, स्वास्थ्य की जाँच के उपकरणों, बीमारियों की निगरानी, ई–स्वास्थ्य, मोबाइल स्वास्थ्य सुविधाओं आदि क्षेत्रों में सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है।

टेलीमेडिसिन के तहत रोगी अपने गांव या शहर से बाहर जाए बिना ही इंटरनेट के जरिए डॉक्टरों से सलाह ले सकते हैं। इसके साथ–साथ बीमारियों का निदान और निगरानी भी संभव है। भारत में 400 से ज्यादा टेलीमेडिसिन केंद्र मौजूद हैं जिन्होंने चिकित्सा सुविधाओं को दूरदराज के क्षेत्रों तक पहुँचाने में मदद की है। एक राष्ट्रव्यापी टेलीमेडीसिन नेटवर्क की स्थापना में भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संस्थान (इसरो) ने सबसे

महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। केंद्रीय दूरसंचार और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय, केंद्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय, अनेक राज्य सरकारों तथा चिकित्सा संस्थानों ने भी अपने-अपने स्तर पर योगदान दिया है।

इसरो ने स्वदेशी तकनीक और भारतीय उपग्रह प्रणाली को इस्तेमाल करते हुए ग्रामसेट (ग्रामीण उपग्रह कार्यक्रम) के तहत राज्य सरकारों के सहयोग से विशाल देशव्यापी टेलीमेडिसिन नेटवर्क स्थापित कर लिया है। आज यह नेटवर्क ज्यादातर राज्यों में सक्रिय है और भौगोलिक विषमताओं वाले कश्मीर, राजस्थान, झारखंड, छत्तीसगढ़, ओडिशा और उत्तर-पूर्वी राज्यों तक के लोगों को आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं से जोड़ने में मदद कर रहा है। अंडमान निकोबार द्वीपसमूह जैसे दूरदराज के इलाके भी इसकी बदौलत उपग्रह के जरिए देश के प्रमुख अस्पतालों से जुड़ चुके हैं। इस नेटवर्क के साथ 245 अस्पतालों, 205 जिला/ग्रामीण स्वास्थ्य केंद्रों और 40 सुपर स्पेशिलिटी अस्पताल जुड़े हैं जिनमें लाखों लोगों का इलाज किया जा चुका है।

एशिया और प्रशांत के लिए संयुक्त राष्ट्र आर्थिक और सामाजिक आयोग की बैंकाक बैठक में प्रो. एस.के. मिश्र की तरफ से पेश किया गया दस्तावेज ई-स्वास्थ्य के क्षेत्र में भारत की योजनाओं और कामयाबियों का उपयोगी ब्यौरा देता है। इसके अनुसार केंद्र सरकार के दूरसंचार और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय ने भी राज्य सरकारों के सहयोग से देशभर में 75 टेलीमेडिसिन केंद्र स्थापित किए हैं। यह देश इतना बड़ा है कि इसके किसी भी क्षेत्र में किसी गंभीर बीमारी का प्रकोप होना और फिर उसका तेजी से आसपास के इलाकों तक फैल जाना असंभव नहीं है। ऐसी बीमारियों और महामारियों पर निगरानी रखने में उपग्रह आधारित प्रणालियां वरदान सिद्ध हो सकती हैं। केंद्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय राष्ट्रीय स्तर पर समेकित रोग निगरानी कार्यक्रम चलाता है जिससे राज्यों के सभी जिला अस्पतालों और मेडिकल कॉलेजों को जोड़ा गया है। इस नेटवर्क का इस्तेमाल दूरस्थ चिकित्सा सलाह, चिकित्सा कर्मचारियों की दूरस्थ शिक्षा और प्रशिक्षण और बीमारियों पर नजर रखने के लिए किया जा रहा है। ग्रामीण दूरस्थ चिकित्सा के क्षेत्र में भी कई पायलट परियोजनाएं शुरू की गई हैं।

केंद्र के साथ-साथ राज्य सरकारें भी अपने स्तर पर टेलीमेडिसिन सुविधाओं के विकास में जुटी हैं। ओडिशा और उत्तराखंड की सरकारों ने अपने माध्यमिक स्तर के अस्पतालों का एक संजाल निर्मित किया है जिसे लखनऊ के संजय गांधी स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान के साथ जोड़ा गया है। इसने ग्रामीण मरीजों को जरूरत पड़ने पर उच्च-स्तरीय चिकित्सा सलाह पाने का मार्ग प्रशस्त किया है। उधर राजस्थान सरकार ने इसरो के साथ मिलकर अपने मेडिकल कॉलेजों, जिला अस्पतालों और चिकित्सा वाहनों का टेलीमेडिसिन नेटवर्क स्थापित किया है। छत्तीसगढ़, कर्नाटक आदि राज्यों ने भी इस क्षेत्र में अच्छी प्रगति की है।

टेलीमेडिसिन के क्षेत्र में अनेक सरकारी और गैर-सरकारी चिकित्सा संस्थानों ने भी अपने स्तर पर अच्छी प्रगति की है। लखनऊ के संजय गांधी स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान में सन् 1999 में ही टेलीमेडिसिन की शुरुआत हो गई थी। संस्थान ने इस क्षेत्र में डॉक्टरों और दूसरे चिकित्सा कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने के लिए स्कूल ऑफ टेलीमेडिसिन एंड बायोमेडिकल इन्फॉरमेटिक्स की भी स्थापना की है जो केंद्रीय सूचना प्रौद्योगिकी विभाग के राष्ट्रीय टेलीमेडिसिन संसाधन केंद्र से मान्यता प्राप्त है। यहां दिल्ली के अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान का उल्लेख करना जरूरी है जिसने जम्मू-कश्मीर, हरियाणा, ओडिशा, उत्तर-पूर्वी राज्यों के लोगों को भी इस सुविधा से जोड़ा है। उधर, चंडीगढ़ के पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च (पी. जी. आई. एम. आई. आर.) ने हरियाणा और पंजाब में टेलीमेडिसिन नेटवर्क का प्रसार किया है।

जिन निजी संस्थानों का काम उल्लेखनीय है, उनमें अमृता इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज (कोच्चि), अपोलो अस्पताल समूह, एशिया हार्ट फाउंडेशन (बंगलुरु), टाटा मेमोरियल अस्पताल (मुंबई), फोर्टिस अस्पताल, नारायण हृदयालय, गंगाराम अस्पताल (नई दिल्ली), शंकर नेत्रालय (चेन्नई), मीनाक्षी आई मिशन (मदुरै) आदि शामिल हैं। दिल्ली के गंगाराम अस्पताल और कोच्चि के अमृता संस्थान ने गांवों में स्पेशिलिटी स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया कराने के लिए मोबाइल टेली-हॉस्पिटल शुरू किए हैं।

स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में एक और अहम चुनौती का समाधान करने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल हो रहा है और वह है अस्पतालों और रोगियों के दस्तावेजों, मेडिकल रिकॉर्ड आदि को सुव्यवस्थित ढंग से सहेजना। धीरे-धीरे हमारे अस्पताल इन रिकॉर्डों को कागजों के रूप में सहेजने की बाध्यता से मुक्त हो रहे हैं और इलेक्ट्रॉनिक पद्धतियों को अपना रहे हैं। इस काम के लिए प्रगत संगणन विकास केंद्र (सीडैक) ने संजय गांधी स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, लखनऊ के साथ मिलकर एक हॉस्पिटल इन्फॉरमेशन सिस्टम का विकास किया है। इसके जरिए न सिर्फ अस्पतालों के प्रबंधन की जटिल चुनौतियों का समाधान हो गया है बल्कि दस्तावेजों को स्थायी रूप से इलेक्ट्रॉनिक स्वरूप में सहेजने और इस्तेमाल करने की सुविधा भी मिल गई है। अनेक सरकारी और गैर-सरकारी अस्पतालों ने

भी अपने इलेक्ट्रॉनिक मेडिकल रिकॉर्डों के रखरखाव की सुविधाए विकसित करवाई हैं।

चिकित्सा से संबंधित जानकारियों, सूचनाओं, शोध और विशेषज्ञताओं, डाटा आदि को एक–दूसरे के साथ साझा करने में भी चिकित्सा संस्थानों द्वारा सूचना प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल किया जा रहा है। इस संदर्भ में नेशनल इन्फॉरमेटिक्स सेंटर और इंडियन काउंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च के आपसी सहयोग से इंडियन मेडिकल लिटरेचर एनालिसिस एंड रिट्राइवल सिस्टम का विकास किया गया है। अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (नई दिल्ली), पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एंड रिसर्च (चंडीगढ़), संजय गांधी स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान (लखनऊ), क्रिस्चियन मेडिकल कॉलेज (वेल्लोर) और अमृता आयुर्विज्ञान संस्थान (कोच्चि) भी अपनी शैक्षणिक सूचनाओं, शोध प्रक्रियाओं व निष्कर्षों तथा दस्तावेजों को टेलीमेडिसिन नेटवर्क के जरिए दूसरे संस्थानों के साथ साझा कर रहे हैं।

चिकित्सा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में शिक्षण और प्रशिक्षण के संदर्भ में सूचना प्रौद्योगिकी और इंटरनेट उपयोगी भूमिका निभा रहे हैं। अनेक चिकित्सा संस्थानों ने ऐसी शिक्षण–प्रशिक्षण परियोजनाएं शुरू की हैं जिनमें सूचना प्रौद्योगिकी का रचनात्मक इस्तेमाल किया गया है। मिसाल के तौर पर संजय गांधी स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान संस्थान, लखनऊ ने उत्तर प्रदेश सरकार और केंद्रीय सूचना प्रौद्योगिकी विभाग के साथ मिलकर स्कूल ऑफ टेलीमेडिसिन एंड बायोमेडिकल इन्फॉरमेटिक्स की स्थापना की है। इसमें कई तरह की प्रयोगशालाएं मौजूद हैं जिनमें कृत्रिम मेधा (आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस), वर्चुअल रियलिटी और रोबोटिक्स सहित आधुनिक सुविधाओं और तकनीकों का प्रयोग किया गया है। टेलीमेडिसिन, चिकित्सालय सूचना प्रणाली, बायोमेडिकल इन्फॉरमेटिक्स, चिकित्सकीय मल्टीमीडिया, चित्र प्रबंधन चिकित्सकीय ज्ञान प्रबंधन आदि का प्रयोग यहाँ प्रचुरता से हुआ है। अन्ना विश्वविद्यालय, चेन्नई के सहयोग से अपोलो टेलीमेडिसिन नेटवर्क फाउंडेशन ने टेली–हेल्थ टेक्नोलॉजी में पंद्रह दिन का सर्टिफिकेट कोर्स भी तैयार किया है जिसके तहत प्रशिक्षणार्थियों को तकनीकी, चिकित्सकीय और प्रबंधकीय कौशल से लैस किया जाता है। शिक्षण–प्रशिक्षण क्षेत्र में परियोजनाएं और भी हैं। उदाहरण के तौर पर राष्ट्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण संस्थान में स्थापित टेली–ट्रेनिंग सेंटर, जिसकी स्थापना में केंद्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय ने पहल की है। यहाँ सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं को ई–शिक्षण के जरिए इलेक्ट्रॉनिक और डिजिटल तौर–तरीकों से प्रशिक्षण दिया जाता है।

यहाँ केंद्र सरकार के नेशनल ई–गवर्नेंस प्लान का जिक्र करना आवश्यक है जिसके तहत न सिर्फ इंटरनेट और दूसरे तकनीकी माध्यमों का इस्तेमाल करते हुए सरकारी सुविधाओं को आम नागरिकों तक पहुंचाया जाना है बल्कि इन सेवाओं को और भी अधिक गुणवत्तापूर्ण तथा प्रभावी बनाने के लिए भी नए माध्यमों की मदद ली जानी है। स्वास्थ्य और चिकित्सा सेवाएं इस परियोजना का महत्वपूर्ण स्तंभ हैं। केंद्रीय सूचना प्रौद्योगिकी विभाग के संस्थान नेशनल इन्फॉरमैटिक्स सेंटर (एन.आई.सी.) की इस परियोजना में प्रधान भूमिका है। यह समाज के निचले स्तर तक स्तरीय स्वास्थ्य सेवाएं और सुविधाएं पहुंचाने में बेहद कारगर सिद्ध हो सकती है।

राष्ट्रीय ई-स्वास्थ्य प्राधिकरण भी विचाराधीन

स्वास्थ्य सेवाओं के क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी, विशेषकर इंटरनेट का अधिकतम लाभ लेने की कोशिशों को तब और मजबूती मिलेगी जब राष्ट्रीय ई–स्वास्थ्य प्राधिकरण (एन.ई.एच.ए.) की स्थापना हो जाएगी। केंद्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय ने इस आशय का प्रस्ताव किया है। पिछली 20 अप्रैल को विभाग ने प्रस्तावित ई–स्वास्थ्य प्राधिकरण की परिकल्पना और अवधारणा का ब्यौरा केंद्र सरकार के विचार के लिए जारी किया था।

वास्तव में मंत्रालय एकीकृत स्वास्थ्य सूचना प्रणाली के विकास की दिशा में कदम बढ़ा रहा है, जिसके दायरे में टेलीमेडिसिन और एम–हेल्थ (मोबाइल माध्यमों से स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता) आएंगे। प्रस्तावित ई–स्वास्थ्य प्राधिकरण इस योजना को क्रियान्वित करने का दायित्व संभालेगा। इस प्रक्रिया में वह स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं, उपभोक्ताओं, स्वास्थ्य संबंधी तकनीकें मुहैया कराने वालों और नीति निर्माताओं के साथ मिलकर काम करेगा। रोगियों के स्वास्थ्य से संबंधित सूचनाओं और दस्तावेजों की निजता और सुरक्षा सुनिश्चित करने का काम भी उसके जिम्मे आएगा।

ई–स्वास्थ्य प्राधिकरण की प्रस्तावित जिम्मेदारियों में देश भर में विभिन्न स्तरों पर ई–स्वास्थ्य समाधानों का प्रयोग सुनिश्चित करवाना, स्वास्थ्य सूचना एक्सचेंजों के माध्यम से विभिन्न आईटी प्रणालियों को एकीकृत करना, और राज्य तथा राष्ट्र स्तर पर रोगियों की सूचनाओं की गोपनीयता सुनिश्चित करते हुए इलेक्ट्रॉनिक स्वास्थ्य दस्तावेज भंडार/एक्सचेंज प्रणाली के सुनियोजित विकास की प्रक्रिया का निरीक्षण करना।

(लेखक सूचना प्रौद्योगिकी विषय के विशेषज्ञ हैं)
ई–मेल : balendudadhich@gmail.com

मातृ-शिशु देखभाल की दिशा में नए प्रयास

—सुधीर तिवारी

राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के तहत माताओं और बच्चों को प्रभावी स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय जैव प्रौद्योगिकी का अभिनव इस्तेमाल कर रहा है। मातृ-शिशु देखभाल कार्यक्रम के तहत प्रसव-पूर्व और प्रसव के बाद देखभाल के लिए जैव प्रौद्योगिकी के अभिनव उपयोग की दिशा में सरकार द्वारा उठाए जा रहे नए कदमों का लेखा-जोखा इस लेख में दिया गया है।

मदर एंड चाइल्ड ट्रैकिंग सिस्टम (एमसीटीएस)

सभी गर्भवती महिलाओं को समय पर प्रसव–पूर्व व प्रसव के बाद सेवाएं प्रदान करने तथा सभी बच्चों के टीकाकरण के लिए स्वास्थ्य मंत्रालय ने 2010 में सभी राज्यों और केन्द्रशासित क्षेत्रों में एक वेब आधारित प्रणाली लागू की जिसे मदर एंड चाइल्ड ट्रैकिंग सिस्टम (एमसीटीएस) के नाम से जाना जाता है। यह सभी गर्भवती महिलाओं और पांच वर्ष तक के बच्चों के व्यक्तिगत विवरण जैसे नाम, पता, मोबाइल नंबर आदि दर्ज करता है। अब तक 2.24 लाख सहायक नर्स मिडवाइफ (एएनएम) और 9.31 लाख मान्यता प्राप्त सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं (आशा) द्वारा कुल 14 करोड़ से भी ज्यादा गर्भवती महिलाओं को एमसीटीएस में पंजीकृत किया गया है। एमसीटीएस का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सभी गर्भवती महिलाओं को पूर्ण और गुणवत्तापूर्ण प्रसवपूर्व और प्रसव के बाद देखभाल सेवाएं प्राप्त हो और सभी बच्चों को टीकाकरण सेवाओं की पूरी श्रृंखला उपलब्ध हो। एमसीटीएस के तहत लाभार्थियों को उपयुक्त स्वास्थ्य जागरुकता संदेश उनके मोबाइल पर भेजे जा रहे हैं। ये संदेश गर्भावस्था या बच्चे की जन्मतिथि के आधार पर समय–समय पर लाभार्थियों को भेजे जाते हैं।

एमसीटीएस के डाटा आधार को एएनएम द्वारा मोबाइल फोन के जरिए उन्नत बनाने के लिए अनस्ट्रक्चर्ड सप्लीमेंटरी सर्विसेस डाटा (यूएसएसडी) आधारित एक प्रणाली शुरू की गई है। एक टैबलेट आधारित प्रणाली विकसित करने का प्रयास किया जा रहा है, जिसके जरिए स्वास्थ्य कार्यकर्ता पंजीयन कार्य और प्रदत्त सेवाओं से संबंधित सूचना उपलब्ध कराने का काम टेबलेट के जरिए कर सकेंगे। इससे समय पर पंजीयन, सटीक सूचनाएं उपलब्ध कराने और सूक्ष्म योजनाएं बनाने में मदद मिलेगी। सही पहचान व रिकार्ड तैयार करने के लिए इसे 'आधार' के साथ जोड़ने की भी योजना बनायी जा रही है। एक स्व–पंजीयन वेब पोर्टल भी जल्द शुरू किया जाएगा जहां लाभार्थी उनसे संबंधित एएनसी, पीएनसी आदि के विवरण देख सकेंगे।

मदर एंड चाइल्ड ट्रैकिंग फैसिलिटेशन सेंटर (एमसीटीएफसी)

स्वास्थ्य मंत्रालय ने राष्ट्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण संस्थान (एनएचएफडब्ल्यू) में मदर एंड चाइल्ड ट्रैकिंग फैसिलिटेशन सेंटर भी स्थापित किया है। मातृ–शिशु को दी जाने वाली स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के तहत उठाया गया यह एक बड़ा कदम है।

एमसीटीएफसी में 86 सीटें हैं और इसका निम्न उद्देश्य है:

- एमसीटीएस को एक सहायक तंत्र उपलब्ध कराना और गर्भवती महिलाओं, बच्चों के माता–पिता और स्वास्थ्यकर्मियों को फोन करके इसमें दर्ज की गई सूचनाओं की वैधता पता लगाना।
- गर्भवती महिलाओं, बच्चों के माता–पिता और सामुदायिक स्वास्थ्यकर्मियों को समय–समय पर उपयुक्त सूचनाएं और मार्गदर्शन उपलब्ध कराना ताकि उन्हें स्वास्थ्य सेवाओं के प्रति जागरूक किया जा सके। साथ ही सही स्वास्थ्य आचरण और प्रचलनों को बढ़ावा देना।
- विभिन्न मातृ–शिशु स्वास्थ्य सेवाओं, जेएसएसके, जेएसवाई, आरबीएसके, नेशनल आयरन प्लस इनिशिएटिव (एनआईपीआई) जैसी केन्द्रीय योजनाओं और आशाओं द्वारा गर्भनिरोधकों के वितरण के संबंध में सेवादाताओं और सेवा प्राप्तकर्ताओं से संपर्क कर उनसे फीडबैक लेना। आसानी और शीघ्रता से योजनाओं की प्रभावशीलता के मूल्यांकन में ये फीडबैक भारत सरकार और राज्य सरकारों के लिए मददगार होंगे। इससे बेहतर स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए सुधारात्मक कदम उठाने में भी मदद मिलेगी।
- आशा और एएनएम कार्यकर्ताओं से आवश्यक दवाओं, ओआरएस पैकेटों और गर्भनिरोधकों की उपलब्धता जांचना।

किलकारी

'किलकारी' के नाम से एक आईवीआरएस आधारित एप्लीकेशन पायलट तौर पर शुरू की गई है जिसके तहत मातृ–शिशु स्वास्थ्य सेवाओं से संबंधित ऑडियो संदेश गर्भवती महिलाओं और शिशु के माता–पिता को भेजे जा रहे हैं। गर्भवती महिलाओं और शिशु के माता–पिता को प्रोत्साहित करने और उन्हें जागरूक बनाने के लिए 18 संदेशों की श्रृंखला तैयार की गई है, जो गर्भावस्था के प्रत्येक चरण और शिशु की उम्र के आधार पर विशेषकर उनकी जरूरतों के मुताबिक पेशेवर ढंग से सरल हिंदी भाषा में रिकार्ड किए गए हैं। यह ऑडियो संदेश मोबाइल के जरिए लाखों लाभार्थियों विशेषकर उच्च फोकस वाले राज्यों के प्राथमिकता वाले जिलों में रहने वाली गर्भवती महिलाओं और बच्चों के माता–पिताओं को भेजे जाएंगे। एक अन्य आईवीआरएस आधारित एप्लीकेशन 'मोबाइल अकादमी' को भी आशा और एएनएम कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए जांचा–परखा जा चुका है। इन एप्लीकेशनों को 15 अगस्त, 2015 को राष्ट्रीय–स्तर पर लांच किया जाना प्रस्तावित है। इनका मकसद जागरुकता फैलाना, गर्भवती महिलाओं और माता–पिता को बेहतर स्वास्थ्य संबंधी जानकारी देना और स्वास्थ्यकर्मियों को प्रशिक्षण प्रदान करना है।

मातृ एवं शिशु विज्ञानः समय–पूर्व प्रसव की चुनौती से निपटने का कार्यक्रम

दुनियाभर में समय–पूर्व प्रसव नवजात बच्चों की मृत्यु का एक बड़ा कारण है। समय–पूर्व प्रसव का मतलब यह है कि गर्भवती माता को 37 सप्ताह के पूर्व ही प्रसव का सामना करना पड़े। भारत में सालभर में पैदा होने वाले कुल 27 मिलियन बच्चों में से 3.6 मिलियन बच्चे समय के पहले जन्म लेते हैं। इनमें से 03 लाख से अधिक समय–पूर्व जन्म होने वाले बच्चे विभिन्न जटिलताओं के कारण मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। भारत में समय–पूर्व पैदा होने वाले बच्चों की संख्या सबसे अधिक है और पूरे विश्व में इस कारण जो बच्चे मर जाते हैं, उनमें 25 प्रतिशत बच्चे भारत के होते हैं। समय–पूर्व प्रसव का प्रभाव बच्चे के शुरुआती जीवन पर तो पड़ता ही है, लेकिन इसका प्रभाव बाल काल और वयस्क जीवन पर भी रहता है।

कार्यक्रम के अध्ययन, लक्ष्य, प्रयास और संभावित प्रभाव

समय–पूर्व प्रसव को कम करने में हमारी असमर्थता का प्रमुख कारण यह है कि हम समय–पूर्व प्रसव के कारणों को अच्छी तरह नहीं समझते। समय–पूर्व प्रसव शारीरिक, वातावरण संबंधी और जैविक संबंधी घटकों के संयुक्त कारणों से होता है। इनमें जैविक संबंधी कारण बहुत प्रभावी हैं जिनकी वजह से महिलाओं को समय–पूर्व प्रसव हो जाता है।

समय–पूर्व प्रसव के लिए जो वैज्ञानिक कारण जिम्मेदार हैं, उन्हें गर्भधारण के शुरुआती समय में ही पहचानना जरूरी है। इसके बाद पूरे गर्भकाल के दौरान जीवनशैली संबंधी घटकों का भी अध्ययन करना जरूरी होता है। इस समय में अनेक जैविक बदलाव होते हैं, जिन्हें गर्भवती महिला की रक्त जांच और अन्य जैविक जांचों से समझा जा सकता है। इसके अलावा जैविक और जीवनशैली के घटकों के बीच का अंतराल गर्भवती महिलाओं में बहुत अधिक होता है, इसलिए यह जरूरी है कि इसके बारे में भी पूरी सूचनाएं जमा की जाएं।

राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय विमर्शों के बाद विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अधीन जैव प्रौद्योगिकी विभाग ने समय–पूर्व प्रसव के संबंध में सभी घटकों और कारकों को अपने इस कार्यक्रम में शामिल किया है। कार्यक्रम के पहले चरण के अंतर्गत 05 वर्ष की अवधि के लिए 48.85 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं।

दीर्घकालिक लक्ष्य

- समय–पूर्व प्रसव के खतरे के विभिन्न स्तरों को गर्भधारण के पूर्व या गर्भधारण के शुरुआती समय में ही पहचान लेना।
- ऐसे सरल और बेहतर उपायों को लागू करना ताकि समय पर उनका इस्तेमाल करके समय–पूर्व प्रसव से बचा जा सके।

रंग ला रहा है मिशन इंद्रधनुष

वर्ष 2020 तक करीब 90 लाख बच्चों को पूर्ण टीकाकरण के जरिए सात जानलेवा बीमारियों से बचाने के उद्देश्य से मिशन इंद्रधनुष शुरू किया गया है। स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने 25 दिसंबर, 2014 को सुशासन दिवस के अवसर पर 'मिशन इंद्रधनुष' की शुरुआत की। इस मिशन में उन बच्चों को शामिल किया गया है जिन्हें टीके लगाए ही नहीं गए या फिर आधे–अधूरे लगे हैं। इन बच्चों को विभिन्न कारणों से टीकाकरण के नियमित दौरों में शामिल नहीं किया जा सका था। मिशन के तहत इन्हें डिप्थीरिया, काली खांसी, टिटनेस, पोलियो, तपेदिक, खसरा और हेपेटाइटिस बी से पूरी तरह प्रतिरक्षित किया जाएगा। देश के चुनिंदा राज्यों और जिलों में जापानी एंसेफेलिइटिस और हीमोफाइलस इंफ्लूएंजा टाइप बी के खिलाफ टीकाकरण भी किया जाएगा। इसके अलावा गर्भवती महिलाओं को भी टिटनेस का टीका लगाए जाने की योजना है।

मिशन इंद्रधनुष का शुरुआती चरण 28 राज्यों के 201 जिलों में चलाया गया। इस चरण का पहला दौर विश्व स्वास्थ्य दिवस के मौके पर सात अप्रैल, 2015 को शुरू हुआ और हफ्ते भर से ज्यादा समय तक चला। इसके हफ्ते भर से अधिक समय के तीन और दौर मई, जून और जुलाई में सात तारीख को शुरू किए जाने थे। इस चरण को जिन जिलों में चलाया गया उनमें टीकों से वंचित और आधेअधूरे टीकाकरण वाले लगभग 50 फीसदी बच्चे हैं। इनमें से 82 जिले सिर्फ चार राज्यों–उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश और राजस्थान में हैं जिनमें टीकों से वंचित या आधेअधूरे टीकाकरण वाले देश के लगभग 25 फीसदी बच्चे हैं।

इन 201 जिलों में भी उन 4 लाख रिहाइशी समूहों पर खास ध्यान दिया जा रहा है जिनमें विभिन्न भौगोलिक, जनसांख्यिकी और जातीय कारणों तथा आयोजन की दिक्कतों की वजह से टीकाकरण बहुत कम हुआ है। इनमें घुमंतू समूहों, सड़कों, निर्माण स्थलों और ईंट भट्टों पर काम करने वाले मजदूरों, वनवासियों तथा आदिवासियों को शामिल किया गया है। शुरुआती चरण के पहले दौर में 54.4 लाख टीके लगाए गए। कुल 5.8 लाख गर्भवती महिलाओं को टीके लगाए गए और इनमें से 2.5 लाख का पूर्ण प्रतिरक्षण किया गया। इस दौर में कुल 20.8 लाख बच्चों को टीके लगाए गए और इनमें से 4.7 लाख का पूर्ण प्रतिरक्षण किया गया।

मिशन के कार्यान्वयन पर नजर रखने के लिए राज्य और केन्द्र–स्तर के 3600 से अधिक निगरानीकर्ताओं को तैनात किया गया है। लगभग 9 लाख अग्रिमकर्मियों को प्रशिक्षण देने के अलावा विभिन्न राज्यों में मिशन के कार्यान्वयन में आने वाली दिक्कतों की पहचान और विश्लेषण कर उन्हें दूर करने के प्रभावशाली ढांचे का निर्माण किया गया है। सितंबर, 2015 में शुरू होने वाले मिशन के दूसरे चरण में कुल 297 जिलों को लक्ष्य किया जाएगा। मिशन इंद्रधनुष के तहत प्रतिरक्षित बच्चे उन बच्चों के अलावा हैं जिनका व्यापक प्रतिरक्षण कार्यक्रम के तहत टीकाकरण किया गया है। सरकार की यह भी योजना है कि मिशन इंद्रधनुष के दौरान जिन बच्चों का टीकाकरण किया जाए उन्हें उपहारस्वरूप ओआएस का पैकेट और 14 जिंक की गोलियां भी दी जाएं ताकि उन्हें डायरिया के खतरे से भी बचाया जा सके।

- ऐसे अतिरिक्त उपायों को विकसित करना ताकि असामान्य/नये माइक्रोब्स का पता लगाया जा सके।
- संक्रमण, सूजन और हार्मोन संबंधी इलाज का समय पर उपयोग करना।
- जैविक प्रणाली को बेहतर रूप से समझने के लिए उपलब्ध टोकोलाइटिक एजेंट्स का इस्तेमाल।

इस कार्यक्रम की वैज्ञानिक सफलता से निश्चित रूप से रोकथाम के उपायों की खोज होगी, जिससे शिशु और मातृ मृत्यु दर में भी बहुत कमी आएगी।

भागीदारी

समय–पूर्व प्रसव कार्यक्रम के तहत अस्पताल में एक अध्ययन दल बनाया जाएगा, जो गर्भवती महिलाओं की गर्भधारण से लेकर प्रसव के समय तक निगरानी करेगा। इस तरह का अध्ययन दल गुड़गांव, हरियाणा के एक जिला अस्पताल में बनाया जा रहा है।

समय–पूर्व प्रसव के पीछे कई कारण मौजूद हैं, इसलिए उपचारात्मक, जैविक और सांख्यिकीय विज्ञान की विशेषज्ञता की जरूरत है। इस आधार पर शिशु चिकित्सा, स्त्री रोग चिकित्सा, संक्रामक रोग चिकित्सा, महामारी विज्ञान, जीवाणु विज्ञान, रोग प्रतिरोधक विज्ञान, कोशिका एवं सूक्ष्म कोशिका जीव विज्ञान, अनुवांशिकीय विज्ञान, सांख्यिकीय और प्रणाली जीव विज्ञान जैसे महत्वपूर्ण विषयों को इसके अध्ययन के लिए सम्मिलित किया जाएगा।

वैश्विक गुणवत्ता आश्वासन

इस अध्ययन में जो भी आंकड़े और जैव नमूने जमा किए जाएंगे, वे न केवल मौजूदा समय के लिए बल्कि भावी समय के लिए भी बहुत महत्वपूर्ण हैं। इसलिए यह जरूरी है कि इन आंकड़ों और जैव नमूनों को दुनियाभर में स्वीकृत मानकों के तहत जमा किया जाए। इन मानकों को विश्व स्वास्थ्य संगठन के दिशा–निर्देशों के अनुरूप तैयार किया गया है। आंकड़ों का रखरखाव और उनका आदान–प्रदान ग्लोबल एलायंस फॉर जेनोमिक्स एंड हेल्थ (जीए4जीएच) के दिशा–निर्देशों के अनुरूप होगा, जिसका जैव प्रौद्योगिकी विभाग साझेदार है। जैव प्रौद्योगिकी विभाग ग्लोबल कोएलीशन टू एडवांस प्रीटर्म बर्थ रिसर्च (जी–सीएपीआर) का भी सदस्य है। इसका प्रमुख अभियान विस्तृत नेटवर्कों, संपर्कों और संगठनों के बीच सहयोग के जरिए अनुसंधान करना है, ताकि अंतर्राष्ट्रीय–स्तर पर समय–पूर्व प्रसव में कमी लाने के लिए किए जाने वाले अनुसंधान का वित्तपोषण किया जा सके।

प्रबंधन एवं निगरानी

प्रासंगिक आंकड़ों को जमा करने के लिए गुड़गांव जनरल अस्पताल में अनुसंधान चिकित्सकों, नर्सों, परिचालकों, कार्यकर्ताओं और निरीक्षकों का एक समर्पित अनुसंधान दल तैनात किया गया है। एक अलग परियोजना प्रबंधन दल भी बनाया गया है, जिसमें विशेषज्ञ समूहों को रखा गया है। यह दल आंकड़ों का रखरखाव, गुणवत्ता आदि का काम करेगा जो लोग अध्ययन में हिस्सा लेने के लिए रुचि रखते हैं, उनकी स्वीकृति लेकर उन्हें अध्ययन में शामिल किया जाएगा।

कार्यक्रम की निगरानी एक विशेष समिति करेगी, जिसमें अपने–अपने क्षेत्र के राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ शामिल हैं। ये कार्यक्रम का मार्ग–निर्देशन करेंगे। वैज्ञानिक, तकनीकी और वित्तीय मामलों को देखने के लिए एक कार्यक्रम प्रबंधन समिति भी बनाई गई है, जो विशेष समिति के तहत काम करेगी।

भारत नवजात कार्ययोजना (आई.एन.ए.पी.)

भारत में हर साल 28 दिन से कम उम्र के लगभग 7.5 लाख नवजात बच्चे अपरिपक्वता, सेप्सिस और दम घुटने की वजह से मर जाते हैं। इन मौतों को रोकने के लिए सरकार ने सितंबर, 2014 से भारत नवजात कार्ययोजना (आईएनएपी) शुरू की है। मौजूदा समय में प्रति एक हजार जन्म में नवजात शिशुओं की मृत्यु दर 28 है। आईएनएपी का लक्ष्य 2030 तक इस मृत्यु दर को 10 से कम करने का है।

इस योजना के तहत गर्भावस्था, प्रसव के समय और उसके बाद महिलाओं की देखभाल के अलावा किशोरियों के स्वास्थ्य पर भी ध्यान दिया जा रहा है। समयपूर्व जन्म लेने वाले और बीमार नवजातों की मुकम्मल देखभाल के लिए कंगारू मातृ सेवा कार्यक्रम चलाया गया है। इस कार्यक्रम से हर साल तकरीबन 5 लाख नवजातों को मौत से बचाया जा सकता है। खून बहने के कारण होने वाली मौतों को रोकने के लिए उपकेन्द्रों में सभी नवजातों को जन्म के समय विटामिन के (K) का इंजेक्शन दिया जाता है।

राष्ट्रीय कृमिनाशी दिवस

पेट के कीड़े देश भर में 1 से 19 साल उम्र के करोड़ों बच्चों की सेहत खराब करते हैं। मिट्टी से फैलने वाले कृमि देश में सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए बड़ी चिंता हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के एक अनुमान के अनुसार 1 से 14 वर्ष उम्र के 24.1 करोड़ (68 फीसदी) बच्चे आंत के परजीवी कृमियों के संक्रमण के जोखिम से गुजर रहे हैं जिससे उनका शारीरिक और मानसिक विकास प्रभावित होता है।

बच्चों को इन कीड़ों से निजात दिलाने के लिए पहला राष्ट्रीय कृमिनाशी दिवस 10 फरवरी, 2015 को मनाया गया। इससे संबंधित गतिविधियां 14 फरवरी, 2015 तक जारी रहीं। इसे 11 राज्यों और संघशासित क्षेत्रों के 277 जिलों में 4.7 लाख स्कूलों और 3.67 लाख आंगनवाड़ी केन्द्रों में लागू किया गया।

है। अभिनव जननी सुरक्षा योजना और जननी शिशु सुरक्षा कार्यक्रम में प्रसव में सुधार की रणनीति को शामिल किया गया है।

नए टीकों को शामिल करने का निर्णय

टीकाकरण से रोकी जा सकने वाली बीमारियों से बच्चों को बचाने के मकसद से देश के व्यापक प्रतिरक्षण कार्यक्रम में नए टीकों को शामिल किए जाने की योजना है। इनमें सुप्त पोलियो, जापानी एंसेफेलाइटिस, रोटावायरस और खसरा रुबेला के टीके शामिल हैं।

भारत पोलियो मुक्त हो चुका है। मगर इस दर्जे को बनाए रखने के लिए सुप्त पोलियो टीके को अक्टूबर, 2015 से व्यापक प्रतिरक्षण कार्यक्रम में शामिल किया जाएगा जिससे हर साल 2.7 करोड़ बच्चे लाभान्वित होंगे। 15 से 65 साल उम्र के बालिगों को जापानी एंसेफेलाइटिस का टीका लगाने के लिए असम, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल के 20 जिलों को चुना गया है। इससे जापानी एंसेफेलाइटिस की वजह से बालिगों की मौतों और रुग्णता को घटाया जा सकेगा।

रोटावायरस विश्व भर में शिशुओं और बच्चों में गंभीर दस्त का प्रमुख कारण है। भारत में हर साल लगभग 2 लाख बच्चों की दस्त से मौत हो जाती है जिनमें से 1 लाख मौतें रोटावायरस की वजह से होती हैं। रोटावायरस का टीका लगाकर हर साल लगभग एक लाख जानें बचाई जा सकती हैं। खसरा रुबेला के टीके से खसरे के उन्मूलन के अलावा रुबेला की रोकथाम भी की जा सकेगी। इस टीके से रुबेला के जन्मजात लक्षण (सीआरएस) के मामलों को घटाने में मदद मिलेगी। मौजूदा समय में सीआरएस के लगभग 25 हजार मामले हर साल सामने आते हैं। इनमें बच्चे की जिंदगी बच भी जाए तो देश में विकलांगों की संख्या में इजाफा होता ही है। समुचित योजना बनाने के बाद शुरू किए जाने वाले खसरा रुबेला टीकाकरण अभियान में 45 करोड़ बच्चों को यह टीका लगाया जाएगा।

सघन दस्त नियंत्रण पखवाड़ा

देश में जुलाई और अगस्त, 2014 में सघन दस्त नियंत्रण पखवाड़ा (आईडीसीएफ) का आयोजन किया गया। दस्त के कारण बच्चों की मौत के पूरी तरह निवारण के लक्ष्य के साथ इसे माह भर के लिए बढ़ा दिया गया। इस पखवाड़े के दौरान उन परिवारों में जीवनरक्षक घोल (ओआरएस) के लगभग 2 करोड़

इसके तहत 1 से 19 साल उम्र के 10.31 करोड़ बच्चों को कृमिनाशक टैबलेट देने का लक्ष्य था जिनमें से 8.98 करोड़ को यह दिया गया। इसका औसत राष्ट्रीय आच्छादन 85 फीसदी से अधिक रहा मगर दादरा नगर हवेली जैसी जगहों पर यह 95 फीसदी तक पहुंच गया। इस कार्यक्रम के लिए 9.49 लाख अग्रिम कार्यकर्ताओं, स्कूली शिक्षकों और प्राध्यापकों को प्रशिक्षित किया गया था।

माताओं और नवजातों में टिटनेस उन्मूलन कार्यक्रम

कुल 29 राज्यों और संघशासित क्षेत्रों को माताओं और नवजातों में टिटनेस के उन्मूलन (एमएनटीई) कार्यक्रम के लिए मंजूरी मिल चुकी है। इस बारे में विश्व स्वास्थ्य संगठन से औपचारिक पत्र भी प्राप्त हो चुका है। विश्व स्वास्थ्य संगठन और संयुक्त राष्ट्र बाल कोष की संयुक्त टीम ने बाकी चार राज्यों नागालैंड, मेघालय, दादरा नगर हवेली तथा जम्मू–कश्मीर के अपने दौरे में एमएनटीई की मंजूरी के लिए मानदंडों को संतोषजनक पाया है। इस बारे में विश्व स्वास्थ्य संगठन की ओर से औपचारिक संदेश दो महीनों में मिल जाने की उम्मीद है।

एमएनटीई के तहत नवजात शिशुओं में टिटनेस के मामलों को हर जिले में प्रत्येक वर्ष प्रति हजार जन्म एक से कम करने का लक्ष्य रखा गया है। वर्ष 1989 में विश्व में टिटनेस की वजह से 7.87 लाख नवजातों की मौत हो गई थी। इनमें से लगभग 2 लाख नवजात शिशुओं की मृत्यु भारत में हुई थी। अस्पतालों में प्रसव की व्यवस्था में सुधार और नियमित प्रतिरक्षण को मजबूत किए जाने से टिटनेस से होने वाली मौतों में कमी आई

पैकेज बांटे गए जिनमें पांच साल तक उम्र के बच्चे हैं। दस्त की रोकथाम के बारे में जागरुकता कार्यक्रम भी चलाए गए। बच्चों और माताओं को जागरूक बनाने के अलावा स्कूलों और सामुदायिक केन्द्रों में ओआरएस बनाने की विधि का प्रदर्शन भी किया गया। इससे देश में दस्त से होने वाली मौतों और रुग्णता को घटाने में मदद मिलेगी।

निमोनिया और दस्त के लिए समेकित कार्य

देश में हर साल 5 साल से कम उम्र के लगभग 5 लाख बच्चे निमोनिया और दस्त की वजह से मौत के मुंह में चले जाते हैं। इन मौतों को रोकने के मकसद से निमोनिया और दस्त के लिए समेकित कार्ययोजना (आईएपीपीडी) को सबसे ज्यादा बाल मृत्यु दर वाले चार राज्यों–उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार और राजस्थान में शुरू किया गया है। इसका मकसद बच्चों की मौतों के लिए सबसे ज्यादा जिम्मेदार निमोनिया और दस्त से निपटना है।

अग्रिम पंक्ति के स्वास्थ्यकर्मियों (फ्रंटलाइन हैल्थ सर्विस प्रोवाइडर्स) का सशक्तिकरण

सहायक नर्सिंग मिडवाइफ (एएनएमस) को अब गर्भवती महिलाओं के समय–पूर्व प्रसव के दौरान लगाने के लिए एंटीनेटल कॉर्टिकोस्टेरॉइड (इंजेक्शन डेक्सामीथासोन) तथा 02 माह की आयु के नवजात शिशुओं में सेप्सिस की रोकथाम के लिए इंजेक्शन जेंटामाइसिन और सीरप एमॉक्साइलीन भी दिए जा रहे हैं। इन कार्यों के सुचारू परिचालन के लिए उपयुक्त प्रचालन तंत्र, क्षमता निर्माण तथा कार्य में प्रयुक्त उपकरणों की उपलब्धता सुनिश्चित की जाएगी।

भारत सरकार ने 24–36 सप्ताह की अवधि में समय–पूर्व प्रसव के लिए दिए जाने वाली सभी गर्भवती महिलाओं को इंजेक्शन डेक्सामीथासोन (04 खुराकें) का एक चक्र देने की अनुशंसा की है। एएनएम को यह अधिकार भी दिया गया है कि वह किसी भी गर्भवती स्त्री को 24–36 सप्ताह की अवधि के काल में वास्तविक समय–पूर्व प्रसव के लिए सिफारिश करते समय उसे इंजेक्शन कॉर्टिकोस्टेरॉइड की प्रसव पश्चात रेफरल खुराक दिया जाना सुनिश्चित कर सकती है। रेफरल संभव न हो पाने अथवा इसके लिए मना किये जाने की स्थिति में वह (एएनएम) इसे पूरा करेगी।

स्वास्थ्य सुविधाओं के अंतर्गत कंगारू मातृ देखभाल (केएमसी) को उन्नत किया जाना

यदि कंगारू देखभाल को प्रतिवर्ष बढ़ावा दिया जाए तो हर साल लगभग 05 लाख नवजात शिशुओं का जीवन बचाया जा सकता है। प्रशिक्षण के लिए हर राज्य में एक आदर्श (मॉडल) इकाई होगी और शेष इकाइयों को नवीनीकृत करके अथवा कुछ सुविधाएं बढ़ाकर चलाया जा सकता है। इस बारे में विस्तृत संचालनात्मक दिशा–निर्देश बनाकर सितम्बर 2014 में ही वितरित कर दिए गए थे।

सभी शिशुओं को जन्म के समय ही विटामिन के का इंजेक्शन लगाए जाने की सुविधा सुनिश्चित की जाएगी। सभी निजी अथवा सरकारी स्वास्थ्य सुविधा केंद्रों में यह सुनिश्चित किया जाएगा कि नवजात के जन्म लेते ही उसे इंजेक्शन विटामिन ए प्रोफईलेक्सिस की एक खुराक दे दी जाए। उप–केन्द्रों पर यह कार्य एएनएम करेगी।

(लेखक भारतीय सूचना सेवा के अधिकारी हैं।)

सदस्यता कूपन

मैं/हम कुरुक्षेत्र का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का

(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक .... दिनांक .... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर अपर महानिदेशक, प्रकाशन विभाग के नाम नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) ....

पता ....

.... पिन ....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003

Mc Graw Hill Education

सिविल सेवा प्रारंभिक परीक्षा 2015

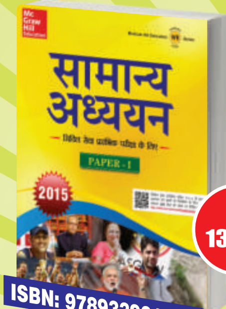

₹ 1350/-
ISBN: 9789339217945

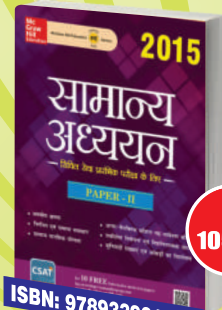

₹ 1050/-
ISBN: 9789339217952

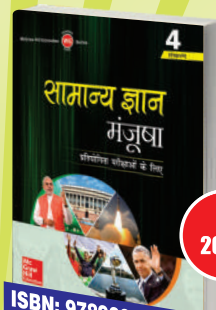

₹ 265/-
ISBN: 9789339220853

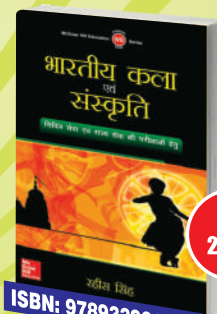

₹ 225/-
ISBN: 9789339219079

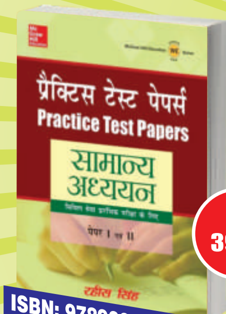

₹ 395/-
ISBN: 9789332901780

₹ 425/-
ISBN: 9789339217754

₹ 395/-
ISBN: 9789339205140

₹ 395/-
ISBN: 9789383286959

अन्य उपयोगी पुस्तकें

ISBN	Author	Title	Price
9789339204204	हुसैन एवं सिंह	भारत का भूगोल	510/-
9789351342663	लक्ष्मीकांत, एम	भारत की राजव्यवस्था	450/-
9789332901186	लक्ष्मीकांत, एम	1000 Plus Questions भारत की राजव्यवस्था	240/-
9781259003752	हुसैन, माजिद	1000 Plus Questions भारत एवं विश्व का भूगोल	285/-
9781259027192	सिंह एवं रस्तोगी	अंतर्वैयक्तिक सह-सम्प्रेशन कौशल सामान्य अध्ययन प्रश्न-II	370/-
9781259064166	सिंह शीलवन्त	सामान्य अध्ययन एनसीईआरटी विषयवार सार संग्रह	315/-
9781259063992	शीलवंत सिंह	सामान्य विज्ञान	390/-

शीघ्र प्रकाशित

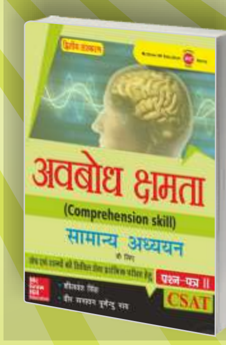

Mc Graw Hill Education

मैक्ग्रॉ हिल एजुकेशन (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड

बी-४, सैक्टर-६३, गौतम बुद्ध नगर, नोएड़ा, उत्तर प्रदेश-201 301

उत्तर भारत: दिल्ली/हरियाणा/पंजाब/चंडीगढ़/जम्मू-कश्मीर/हिमाचल प्रदेश/राजस्थान/मध्य प्रदेश: *आशीष पराशर* (ashish.prashar@mheducation.com); **दिल्ली/राजस्थान:** *दिलीप चौरसिया* (09560072125); *आनन्द सिंह* (09599196777) **हरियाणा/पंजाब/चंडीगढ़/जम्मू-कश्मीर/हिमाचल प्रदेश/दिल्ली/एन-सी-आर:** *जनेन्द्र अत्री* (09599295604); **मध्य प्रदेश:** *रोहित शैल* (07042799341); **उत्तरप्रदेश/उतराखंड:** *जगदीश ध्यानी* (07042799338); *जितेन्द्र मिश्रा* (07042799339)

पूर्वी भारत: बिहार/झारखंड/उड़ीसा: रणविजय कुमार (07042799348); नितेश कुमार निशु (09560779393)

पश्चिम भारत: महाराष्ट्/गोवा/गुजरात/छत्तीसगढ़: *जूनियस रॉड्रिक्स* (09833054319)
नागपुर/छत्तीसगढ़: *सौरभ कानूनगो* (07718812361); **गुजरात:** *नरेन महतो* (07718812363)

विक्रय एवं प्रकाशन हेतु जानकारी हेतु लिखें *reachus@mheducation.com*

Prices are subject to change without prior notic

Join us on
UPSC http://on.fb.me/1yDCZBW

Join us on
Civil Services Main http://on.fb.me/1OzG28E

SHIPPING FREE Above ₹ 500/-

Helpline No.: 1800 103 5875

To buy these products, visit www.mheducation.co.in

सेहत सुधरेगी तो चमकेगी तकदीर

—पार्थिव कुमार

एक स्वस्थ व्यक्ति ज्यादा क्षमता से काम कर खुद और अपने परिवार के लिए अधिक खुशहाली जुटा सकता है। वह देश के सकल घरेलू उत्पाद में योगदान कर समाज और राष्ट्र के भी विकास में अपना किरदार अदा करता है। इस तरह स्वास्थ्य योजनाओं और कार्यक्रमों पर होने वाला सरकारी खर्च देश के आर्थिक विकास में भी मददगार साबित होता है। प्रस्तुत लेख में पिछले एक साल में स्वास्थ्य क्षेत्र में उठाए गए प्रमुख कदमों का ब्यौरा दिया गया है।

भारत जैसे भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विविधता वाले देश में 1 अरब 21 करोड़ से ज्यादा की विशाल आबादी को स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया कराना सरकार के सामने एक बड़ी चुनौती है। खासकर गरीब, पिछड़े और वंचित तबकों तथा दूरदराज के इलाकों में रहने वाले पर्वतीय, वनवासी और आदिवासी नागरिकों के लिए उनकी रिहाइश के नजदीक ही किफायती और भरोसेमंद स्वास्थ्य सेवाओं का इंतजाम करना बेहद दुरुह काम है। समाज में साक्षरता और शिक्षा की कमी की वजह से भी स्वास्थ्य योजनाओं और कार्यक्रमों के निर्माताओं को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

सरकार इन समस्याओं को ध्यान में रखते हुए नागरिकों को सेहत की देखभाल और बीमारियों से बचाव के उपायों के प्रति जागरूक बनाने पर जोर दे रही है। उसकी स्वास्थ्य योजनाओं और कार्यक्रमों में बच्चों, गर्भवती महिलाओं और दूध पिलाने वाली माताओं पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। उसका प्रयास है कि देशवासियों को मामूली रोगों से लेकर कैंसर और एड्स सरीखी गंभीर बीमारियों तक का इलाज उनकी रिहाइश के नजदीक ही कम खर्च पर मिल सके। देश में डॉक्टरों और विशेषज्ञ चिकित्सकों की कमी को देखते हुए बड़ी संख्या में मेडिकल कॉलेजों की स्थापना के लिए कदम उठाए जा रहे हैं।

केन्द्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय ने अपनी प्राथमिकताओं को रेखांकित करते हुए राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति, 2015 का मसौदा तैयार किया है। इस मसौदे को संबंधित पक्षों के बीच चर्चा के लिए सार्वजनिक किया जा चुका है। फिलहाल इस पर मिली प्रतिक्रियाओं और सुझावों का विश्लेषण किया जा रहा है। इस नीति का मकसद वित्त प्रबंध, आधुनिक प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल, मानव संसाधन विकास और कानूनों के माध्यम से रोगों की रोकथाम करना और अच्छे स्वास्थ्य को बढ़ावा देना है।

इससे पहले मंत्रालय ने देश की पहली मानसिक स्वास्थ्य नीति अक्टूबर, 2014 में जारी की थी। इसका मकसद मानसिक स्वास्थ्य की समझ बढ़ाना और सबको मानसिक स्वास्थ्य सेवा मुहैया कराना है। इसमें केन्द्र सरकार, राज्य सरकारों, स्थानीय निकायों और सिविल सोसायटी संगठनों की भूमिकाओं को स्पष्ट किया गया है।

राष्ट्रीय कुष्ठ रोग उन्मूलन कार्यक्रम

वर्ष 2014–15 में अब तक कुष्ठ रोग के लगभग 1.15 लाख मामले सामने आए हैं। इस दौरान कुष्ठ रोग से विकृत हुए अंगों के 2483 ऑपरेशन किए गए हैं। राष्ट्रीय कुष्ठ रोग उन्मूलन कार्यक्रम के तहत इस बीमारी के ज्यादा प्रकोप वाले प्रखंडों में इसके मामलों का पता लगाने के लिए सघन अभियान चलाया गया। इस रोग के सक्रिय मामलों का पता लगाने के लिए 30 जनवरी से 14 फरवरी, 2015 तक कुष्ठ रोग पखवाड़ा का आयोजन किया गया।

विभिन्न सामुदायिक कार्यक्रमों के दौरान जांच शिविर

सरकार जनसाधारण को स्वस्थ रहने और बीमारियों से बचाव के उपायों की जानकारी देने के लिए विभिन्न सामुदायिक कार्यक्रमों का भी इस्तेमाल कर रही है। इन प्रयासों के तहत दिल्ली के पांच रामलीला मैदानों और दुर्गा पूजा पंडालों में स्वास्थ्य चेतना एवं जनसहयोग आंदोलन चलाकर 17 हजार से ज्यादा लोगों की मधुमेह और उच्च रक्तचाप जैसे गैरसंचारी रोगों की जांच की गई। इस आंदोलन के दौरान लोगों को स्वास्थ्यवर्धक आहार, नियमित वर्जिश और स्वस्थ आदतों के प्रति जागरूक किया गया।

दिल्ली में ही नवंबर, 2014 में प्रगति मैदान में व्यापार मेले के दौरान स्वास्थ्य शिविरों में 60 हजार से ज्यादा लोगों की कैंसर समेत सभी बड़े गैरसंचारी रोगों की जांच की गई।

वर्ष 2015 तक कालाज़ार का उन्मूलन

देश के पूर्वी राज्यों में हर साल बड़ी संख्या में लोगों की कालाजार से मौत हो जाती है। इस स्थिति के मद्देनजर 2015 तक कालाज़ार के उन्मूलन के लिए कार्ययोजना उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल और झारखंड में शुरू की गई है। इससे इन चार राज्यों में लगभग 11.657 करोड़ लोगों को लाभ होगा। इस कार्ययोजना के तहत रोगी को इलाज के दौरान मुफ्त भोजन और मजदूरी के नुकसान की भरपाई के लिए एकमुश्त 500 रुपये मुहैया कराए जाएंगे। कालाज़ार के पश्चात डर्मल लेशमैनियासिस के उपचार के लिए 2000 रुपये की एकमुश्त सहायता दी जाएगी।

इस कार्ययोजना के तहत बिहार के 33, झारखंड के 4 और पश्चिम बंगाल के 11 जिलों में डीडीटी के छिड़काव का पहला दौर शुरू हो चुका है। इसके अलावा कालाज़ार की जांच का नया किट भी जारी किया गया है।

राष्ट्रीय पारिवारिक स्वास्थ्य सर्वेक्षण

राष्ट्रीय पारिवारिक स्वास्थ्य सर्वेक्षण (एनएफएसएच) का चौथा दौर 2014 में शुरू किया गया। इस देशव्यापी सर्वेक्षण में नैदानिक, शरीर के माप से संबंधित और जैव–रासायनिक जांचों को भी शामिल किया गया है। रक्त शर्करा और उच्च रक्तचाप को पहली बार एनएफएचएस में शामिल किया गया है। जिला–स्तरीय परिवार सर्वेक्षण और सालाना स्वास्थ्य सर्वेक्षण को बंद कर इनके ज्यादातर महत्वपूर्ण संकेतकों को एनएफएसएच में रखा गया है। एनएफएचएस देश और राज्य के अलावा पहली बार जिला स्तर के भी अनुमान मुहैया कराएगा।

तपेदिक की 13 दवाओं का दवा प्रतिरोधक सर्वेक्षण

स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय ने सितंबर, 2014 में तपेदिक की 13 दवाओं के लिए विश्व का सबसे बड़ा दवा प्रतिरोधक सर्वेक्षण (डीआरएस) शुरू किया। इसके परिणाम साल भर में आने की उम्मीद है। देशव्यापी डीआरएस से संशोधित राष्ट्रीय टीबी नियंत्रण कार्यक्रम को बहुऔषधि प्रतिरोधी तपेदिक के बारे में बेहतर आकलन मिल सकेगा। इस सर्वेक्षण के दौरान लिए गए नमूनों की तपेदिक की 13 दवाओं के लिए संवेदनशीलता की जांच की जाएगी। इनमें से 5 पहली और 8 दूसरी कतार की दवाएं हैं।

संशोधित राष्ट्रीय टीबी नियंत्रण कार्यक्रम के तहत निदान सुविधाओं का तेजी से विस्तार हुआ है। बहुऔषधि प्रतिरोधी टीबी तथा एचआईवी और बाल रोगियों में तपेदिक की बेहद संवेदनशील सूक्ष्म जांच की सुविधाएं विभिन्न राज्यों के 119 केन्द्रों पर मुहैया कराई गई हैं। छह राज्यों– गुजरात, तमिलनाडु, केरल, महाराष्ट्र, कर्नाटक और दिल्ली में दूसरी कतार की दवाओं की बुनियादी संवेदनशीलता जांच की प्रक्रिया शुरू की गई है।

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम के तहत देश भर में खून की 58.67 लाख इकाइयां एकत्र की गईं। इनमें से 84 फीसदी इकाइयां स्वैच्छिक रक्तदान के जरिए जमा की गईं। इस कार्यक्रम में महिला यौनकर्मियों, इंजेक्शन के जरिए मादक दवाएं लेने वालों, प्रवासियों और ट्रक चालकों को एचआईवी से बचाव की सुविधाएं मुहैया कराने पर खास ध्यान दिया जा रहा है। एचआईवी और एड्स के बारे में जनसाधारण को सभी भारतीय भाषाओं में जानकारियां देने के लिए राष्ट्रीय हेल्पलाइन शुरू की गई है। माता–पिता से बच्चों को उपदंश (सिफिलिस) का संचार रोकने के लिए राष्ट्रीय रणनीति योजना 25 फरवरी, 2015 को शुरू की गई। देश भर में रेट्रोवाइरल रोधी दवाओं का आपूर्ति शृंखला प्रबंधन मजबूत करने, इसके प्रभावी इस्तेमाल को बढ़ाने और बर्बादी को घटाने के लिए कंप्यूटरीकृत भंडार प्रबंधन प्रणाली शुरू की गई।

नए एम्स

देश के दूरदराज के इलाकों में रहने वालों को भी आमतौर पर मामूली बीमारियों के इलाज की सुविधा अपनी रिहाइश के नजदीक ही मिल जाती है। लेकिन गंभीर बीमारियों के उपचार के लिए उन्हें दिल्ली, मुंबई या चेन्नई जैसे महानगरों का रुख करना पड़ता है। ऐसी स्थिति में काफी धन खर्च होने के अलावा उन्हें रोजगार का नुकसान भी उठाना पड़ता है। इस तरह के रोगियों को उनके राज्यों में ही इलाज की सुविधा मुहैया कराने के मकसद से रायपुर, भोपाल, पटना, भुवनेश्वर, ऋषिकेश और जोधपुर में छह नए अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थानों (एम्स) की स्थापना का काम तेज कर दिया गया है। पिछले एक साल में इन अस्पतालों ने काम करना शुरू कर दिया है। इनमें उच्च –स्तरीय इलाज के अलावा एमबीबीएस की पढ़ाई भी शुरू हो चुकी है। आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, जम्मू कश्मीर, पंजाब, तमिलनाडु, हिमाचल प्रदेश और असम में भी एक–एक नया एम्स खोला जाना है। आंध्र प्रदेश, पश्चिम बंगाल और महाराष्ट्र में एम्स के लिए निवेश पूर्व की औपचारिकताएं पूरी हो चुकी हैं। असम और तमिलनाडु में स्थल की जांच पूरी की जा चुकी है तथा उत्तर प्रदेश, पंजाब और हिमाचल प्रदेश में इसे जल्दी ही पूरा कर लिया जाएगा।

इन सभी एम्स में मरीजों को अत्याधुनिक और बेहतरीन स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया कराई जाएंगी। इनकी स्थापना से चिकित्सा के क्षेत्र में क्षेत्रीय असंतुलन दूर होगा। इसके अलावा

पिछड़े इलाकों में चिकित्सा शिक्षा, अनुसंधान और उपचार सुविधाओं की क्षमता बढ़ेगी।

सरकारी मेडिकल कॉलेजों का उन्नयन एवं विस्तार

प्रधानमंत्री स्वास्थ्य सुरक्षा योजना (पीएमएसएसवाई) उन्नयन कार्यक्रम के तहत सरकारी मेडिकल कॉलेजों को सुपर स्पेशलिटी ब्लॉकों में तब्दील किया जाएगा। पीएमएसएसवाई के शुरुआती तीन चरणों में 58 सरकारी मेडिकल कॉलेजों को लिया गया था। इनके अलावा 8 राज्यों में 12 अन्य मेडिकल कॉलेजों के उन्नयन की घोषणा भी की गई है। तीसरे चरण में लिए गए 39 सरकारी मेडिकल कॉलेजों में से 31 की विस्तृत परियोजना रिपोर्ट प्राप्त हो चुकी है।

सरकारी मेडिकल कॉलेजों के सुपर स्पेशलिटी ब्लॉकों में उन्नयन से उनमें नई सुविधाएं उपलब्ध कराई जा सकेंगी। ये संस्थान व्यावसायिक शिक्षा, इलाज, रोगी की देखभाल और स्वास्थ्यकर्मियों के प्रशिक्षण के समग्र केन्द्र के रूप में काम करेंगे। इससे राज्यों में स्वास्थ्य सेवा के ढांचे में सुधार आएगा जिसका लाभ स्थानीय लोगों को मिलेगा। पीएमएसएसवाई के पहले और दूसरे चरण में सरकारी मेडिकल कॉलेजों के उन्नयन के लिए 1454.793 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं।

देश के जिन क्षेत्रों में कोई भी सरकारी या निजी मेडिकल कॉलेज नहीं हैं उनमें 58 जिला अस्पतालों का मेडिकल कॉलेज में उन्नयन किया जाएगा। इस बारे में सभी 20 राज्यों और संघ–शासित क्षेत्रों से करार पर दस्तखत किए जा चुके हैं। कुल 22 प्रस्तावों को मंजूर कर राज्यों को 128.53 करोड़ रुपये जारी किए गए हैं।

उत्तर–पूर्वी इंदिरा गांधी क्षेत्रीय स्वास्थ्य एवं चिकित्सा विज्ञान संस्थान (शिलांग) के नर्सिंग कॉलेज और छात्रावास के विस्तार के लिए 68 करोड़ रुपये मंजूर किए गए हैं। इसके अलावा 474 करोड़ रुपये के अनुमानित खर्च से अंडरग्रेजुएट मेडिकल कॉलेज और छात्रावास तथा क्षेत्रीय कैंसर केन्द्र के गठन को भी मंजूरी दी गई है।

उच्चस्तरीय कैंसर देखभाल सुविधाओं के लिए वित्तीय सहायता

उच्चस्तरीय कैंसर देखभाल सुविधाओं के लिए धन की व्यवस्था के कार्यक्रम के तहत राज्य सरकारों के पांच कैंसर संस्थानों–किदवई मेमोरियल इंस्टीट्यूट ऑफ ओंकोलॉजी (बेंगलूरू), कैंसर अस्पताल (अगरतला), गुजरात कैंसर अनुसंधान संस्थान (अहमदाबाद), शेरे कश्मीर आयुर्विज्ञान संस्थान (श्रीनगर) और कैंसर संस्थान, अडयार (चेन्नई) को वित्तीय सहायता प्रदान की गई है। इसके अलावा गवर्नमेंट मेडिकल कॉलेज (कोझिकोड) और गवर्नमेंट मेडिकल कॉलेज (वर्द्धमान) को भी धन मुहैया कराया गया है। इस कदम से विभिन्न राज्यों के कैंसर के मरीजों को उपचार के लिए दूर नहीं जाना होगा और उनके धन की बचत होगी।

भारत सरकार ने कोलकाता के राजारहाट में चितरंजन राष्ट्रीय कैंसर संस्थान के दूसरे परिसर की स्थापना को मंजूरी दे दी है। इस पर 534 करोड़ रुपये खर्च होंगे जिसका 25 फीसदी हिस्सा राज्य सरकार वहन करेगी।

राष्ट्रीय शहरी स्वास्थ्य मिशन

अब तक 906 शहरों और कस्बों को राष्ट्रीय शहरी स्वास्थ्य मिशन के दायरे में लाया गया है। शहरी परिवार कल्याण केन्द्रों, शहरी स्वास्थ्य पोस्टों और शहरी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों समेत 3995 मौजूदा संस्थानों को सुदृढ़ करने के लिए मिशन के तहत धन मुहैया कराया गया है। इसके अलावा 1426 नए शहरी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के लिए धन का इंतजाम किया गया है। 35 नए शहरी सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों की स्थापना के लिए भी सहायता दी गई है। सरकार ने 2353 पूर्णकालिक और 2973 अंशकालिक चिकित्सा अधिकारियों, 160 चिकित्सा विशेषज्ञों, 17584 सहायक नर्सिंग मिडवाइफों, 7209 स्टाफ नर्सों, 2978 फार्मासिस्टों, 3231 प्रयोगशाला तकनीशियनों और 56002 मान्यताप्राप्त सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के पद मंजूर किए हैं।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य पोर्टल शुरू

सरकार ने सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रगति और कंप्यूटर साक्षरता में बढ़ोतरी का फायदा उठाते हुए देशवासियों को सेहत की देखभाल के बारे में प्रामाणिक जानकारियां मुहैया कराने के लिए राष्ट्रीय स्वास्थ्य पोर्टल (http:/nhp.gov.in) 14 नवंबर, 2014 को शुरू किया। पांच भाषाओं–अंग्रेजी, हिंदी, तमिल, बांग्ला और गुजराती में शुरू किए गए इस पोर्टल का मकसद स्वास्थ्य साक्षरता और सेवाओं में सुधार लाना और जनता को विभिन्न बीमारियों से बचाव के उपायों के बारे में बताना है।

सीजीएचएस का विस्तार

केन्द्र सरकार द्वारा स्वास्थ्य सेवा (सीजीएचएस) का विस्तार करते हुए 11 राज्यों की राजधानियों में इसके स्वास्थ्य केन्द्र खोलने के आदेश जारी किए जा चुके हैं। विशाखापत्तनम में सीजीएचएस स्वास्थ्य केन्द्र ने काम करना शुरू कर दिया है। सीजीएचएस के तहत निजी अस्पतालों को सूचीबद्ध करने का काम पूरा हो चुका है। जिन वैधानिक या स्वायत्त संस्थाओं के मौजूदा कर्मचारी सीजीएचएस के दायरे में आते हैं उनके अवकाशप्राप्त कर्मियों को भी इसकी सुविधाएं मुहैया कराने का फैसला किया गया है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)
ईमेलः kr.parthiv@gmail.com

भारत में औषधि मूल्य नियंत्रण प्रणाली

—इंजेटी श्रीनिवास

राष्ट्रीय औषध मूल्य निर्धारण प्रधिकरण एनपीपीए को औषधि (मूल्य नियंत्रण) आदेश (डीपीसीओ) के कार्यान्वयन का उत्तरदायित्व सौंपा गया है और ऐसा करते हुए एनपीपीए मंत्रालयों, राज्य सरकारों, उद्योग, व्यापार एवं उपभोक्ता संगठनों के साथ निकट समन्वय बरकरार रखता है।

राष्ट्रीय औषध मूल्य निर्धारण प्राधिकरण (एनपीपीए) की स्थापना वर्ष 1997 में अनिवार्य एवं जीवनरक्षक दवाओं के मूल्यों पर नियंत्रण के लिए एक स्वतंत्र जिम्मेदार निकाय के रूप में की गई थी। इसके अन्य उत्तरदायित्वों में मूल्य नियंत्रण के अंतर्गत आने वाली औषधियों की सूची की समीक्षा और अद्यतन करना, औषधि निर्माता कम्पनियों, वितरकों और फुटकर कारोबारियों द्वारा मूल्य अनुपालन की निगरानी, दोषी कम्पनियों के अधिप्रभार की ब्याज सहित वसूली, औषधि नियंत्रण के अंतर्गत न आने वाली गैर–अनुसूची औषधियों के संदर्भ में मूल्य निर्धारण की निगरानी, अनिवार्य एवं जीवनरक्षक दवाओं की उपलब्धता की निगरानी एवं सुनिश्चितता, औषधि के मूल्य निर्धारण और संबंधित मामलों के बारे में अनुसंधान अध्ययन करना/प्रायोजित करना तथा केंद्र सरकार को अनिवार्य एवं जीवनरक्षक दवाओं के मूल्य निर्धारण एवं उपलब्धता के बारे में परामर्श देना शामिल है।

भारतीय औषधि उद्योग : भारतीय औषधि उद्योग मात्रा की दृष्टि से दुनिया का तीसरा (करीब 10 प्रतिशत वैश्विक उत्पादन के लिए उत्तरदायी) और मूल्य की दृष्टि से दसवां बड़ा उद्योग है, जो 12–15 प्रतिशत सीएजीआर की दर से बढ़ रहा है। वर्तमान में भारतीय औषधि उद्योग अनुमानित तौर पर 30 बिलियन अमरीकी डॉलर का है, जिसमें से करीब आधा घरेलू बाज़ार बाकी निर्यात के लिए उत्तरदायी है। वर्ष 2020 तक इसका कारोबार 55 बिलियन अमरीकी डॉलर तक पहुंचने की सम्भावना है। भारतीय औषधि उद्योग में 10,000 कम्पनियां हैं, लेकिन इस पर कुछ गिनी–चुनी कम्पनियों का वर्चस्व है। वर्ष 1970 से पहले, यहां बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का वर्चस्व था, लेकिन वर्तमान में इस क्षेत्र में विशाल भारतीय औषधि निर्माण कम्पनियों का वर्चस्व है।

दुनिया भर में औषधि मूल्य नियंत्रण : दुनिया भर में औषधियों पर प्रत्यक्ष मूल्य नियंत्रण/अप्रत्यक्ष मूल्य नियंत्रण है। अमेरिका जैसे कुछेक देशों को छोड़कर, दुनिया भर में औषधि मूल्य नियंत्रण एक सार्वभौमिक विशेषता है। पश्चिमी यूरोप के 16 में से 12 देशों में प्रत्यक्ष मूल्य नियंत्रण और शेष में अप्रत्यक्ष मूल्य नियंत्रण है। ज्यादातर

मध्य एवं पूर्वी यूरोपीय देश संदर्भ मूल्य निर्धारण प्रणाली और चिकित्सा संबंधी तुलनात्मकताओं का इस्तेमाल करते हैं। ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड नुस्खे पर आधारित औषधि मूल्य नियंत्रण प्रणाली का अनुसरण करते हैं। चीन मुनाफे और बिक्री के अंतर के नियंत्रण के आधार पर मूल्य निर्धारित करता है। कनाडा में पेटेंट वाली औषधियों के मूल्यों का समीक्षा बोर्ड और संदर्भ मूल्य निर्धारण है। बहुत से देशों में औषधियों का मूल्य निर्धारण उनकी राष्ट्रीय स्वास्थ्य प्रणाली, प्रतिपूर्ति योजनाओं और स्वास्थ्य बीमा योजनाओं से संबद्ध है।

भारत में औषधि मूल्य नियंत्रण : वर्ष 1962 में चीन के हमले के बाद भारत सुरक्षा अधिनियम के अधीन औषधि (मूल्य नियंत्रण) आदेश (डीपीसीओ), 1963 की घोषणा के साथ पहली बार भारत में औषधि मूल्य नियंत्रण लाया गया। इसके बाद अनिवार्य वस्तु अधिनियम, 1955 के अंतर्गत कई डीपीसीओ (1966, 1970, 1979, 1987 और 1995) घोषित किए गए। नवीनतम औषधि (मूल्य नियंत्रण) आदेश 2013 में अधिसूचित किया गया। डीपीसीओ 2013, राष्ट्रीय औषधि मूल्य निर्धारण नीति 2012 पर आधारित है और देश में औषधि मूल्य नियंत्रण लाने की दिशा में महत्वपूर्ण घटना है। यह तीन मायनों में डीपीसीओ 1995 से अलग है–पहला, इसमें लागत आधारित मूल्य निर्धारण के स्थान पर बाजार आधारित मूल्य निर्धारण को अपनाया गया, दूसरा, इसमें मूल्य निर्धारण करने के उद्देश्य से प्रपुंज औषधि (बल्क ड्रग) अथवा सक्रिय औषधि घटक (एपीआई) और उसके नुस्खों दोनों पर गौर करने की बजाए एपीआई पर आधारित विशिष्ट नुस्खों (फॉर्मुलेशन्स), खुराक की मात्रा और ताकतों पर गौर किया गया और तीसरा, इसमें अनिवार्यता तय करने के लिए राष्ट्रीय आवश्यक दवा सूची (एनएलईएम) 2011 को अपनाया गया।

औषधियों के नुस्खों (फॉर्मुलेशन्स) का मूल्य नियंत्रण : एनएलईएम 2011 में 680 नुस्खों को शामिल किया गया, यदि हम एक से अधिक उपचारात्मक समूहों में शामिल होने वाले नुस्खों को निकाल दें, तो इन नुस्खों की संख्या घटकर 628 रह जाती है। अब तक इन 628 में से 521 अनुसूचित नुस्खों को मूल्य नियंत्रण के दायरे में लाया गया है। करीब 100 नुस्खों को फुटकर बाजार में प्रचलन का अभाव होने के कारण छोड़ दिया गया है, ये सिर्फ मुख्य रूप से संस्थागत बिक्री के लिए उत्तरदायी हैं। पिछले एक वर्ष के दौरान, 256 नुस्खों (अनुसूचित दवाओं, नयी औषधियों और अन्य सहित) को मूल्य नियंत्रण के दायरे में लाया गया है, परिणामस्वरूप उपभोक्ता को करीब 600 करोड़ रुपये की वित्तीय राहत मिली है। वर्तमान में, अनुसूचित औषधियों के संदर्भ में मूल्य नियंत्रण का दायरा घरेलू चल वार्षिक कुल बिक्री (एमएटी) स्तर पर करीब 15 प्रतिशत है, जो लगभग 82,000 करोड़ रुपये है। स्वास्थ्य सुविधाओं को किफायती बनाने के लिए औषधियों का मूल्य नियंत्रण आवश्यक है, क्योंकि औषधियां निजी स्वास्थ्य सुविधाओं पर होने वाले खर्च का 80 प्रतिशत हैं। इसका प्रमुख कारण सरकारी योजनाओं तक सीमित पहुंच होना है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के साथ ही साथ केंद्रीय एवं राज्य स्वास्थ्य बीमा योजनाएं आवश्यक तौर पर अस्पताल में भर्ती मरीजों की स्वास्थ्य संबंधी देखरेख पर केंद्रित हैं। बहिरंग रोगियों की स्वास्थ्य सुविधाओं की लागत, मोटे तौर पर, अब तक मरीजों को ही पहले वहन करनी पड़ती हैं, जिसकी बाद में प्रतिपूर्ति कर दी जाती है। बहुत से अध्ययनों में स्वास्थ्य सुविधाओं पर होने वाले बेतहाशा खर्च और गरीबी में विशेषकर ग्रामीण भारत में सकारात्मक पारस्परिक संबंध दर्शाया गया है। भारत सरकार नए सिरे से तैयार जन औषधि कार्यक्रम के माध्यम से बड़े पैमाने पर जेनरिक दवाओं को प्रोत्साहन देने की योजना बना रही है।

स्वास्थ्य कवरेज और बीमारियों का बोझ : भारत में स्वास्थ्य सुविधाओं पर जीडीपी का 4.1 प्रतिशत भाग खर्च होता है, जबकि इसका वैश्विक औसत 5 से 6 प्रतिशत है। इतना ही नहीं, सरकार की हिस्सेदारी सिर्फ 1.04 प्रतिशत (केंद्र सरकार 0.34 प्रतिशत और राज्य सरकार 0.70 प्रतिशत) है, जो केंद्र सरकार की ओर से प्रति व्यक्ति सालाना खर्च 325 रुपये और सभी राज्यों का सम्मिलित प्रति व्यक्ति सालाना खर्च 632 रुपये बैठता है। यदि हम किफायती औषधियों सहित सभी के लिए किफायती स्वास्थ्य सुविधाएं सुनिश्चित करना चाहते हैं, तो स्वास्थ्य सुविधाओं संबंधी जरूरतों पर सरकार के खर्च में महत्वपूर्ण वृद्धि किए जाने की जरूरत है। वर्तमान में राष्ट्रीय कार्यक्रम समस्त मौतों में से 10 प्रतिशत से भी कम और समस्त रुग्णताओं के 15 प्रतिशत को सम्पूर्ण कवरेज उपलब्ध कराते हैं, इसके अलावा 75 प्रतिशत संचारी रोग राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों का भाग नहीं हैं जबकि देश पर बीमारियों के समग्र बोझ में गैर–संचारी रोगों की हिस्सेदारी करीब 40 प्रतिशत है।

औषधि उत्पादन, आयात, उपलब्धता, बिक्री और मूल्य संबंधी आंकड़े : हाल तक एनपीपीए के पास औषधि उत्पादन, आयात, उपलब्धता, बिक्री और मूल्यों के बारे में अपने आंकड़े नहीं थे। वह औषधियों की बिक्री और मूल्य संबंधी आंकड़ों के लिए पूर्णतया आईएमएस स्वास्थ्य के आंकड़ों और फार्माट्रेक (दोनों निजी स्रोतों) पर निर्भर था, जिनमें गम्भीर खामी थी, क्योंकि ये नमूनों पर आधारित थे और पूरी तरह वैध नहीं थे। एनपीपीए ने राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केंद्र (एनआईसी) की सहायता से अब विनिर्माताओं से सीधे आंकड़े प्राप्त करने की ऑनलाइन व्यवस्था तैयार की है,

जो फॉर्मा प्राइसेज़ डाटा बैंक (पीपीडीबी) कहलाती है। पीपीडीबी से सूचना को ऑनलाइन प्राप्त किया जा सकेगा और उसके बाद आंकड़ों का विश्लेषण किया जा सकेगा, जिससे एनपीपीए को अपने दायित्वों का प्रभावशाली रूप से निर्वहन करने में सहायता मिलेगी। यह व्यवस्था औषधि निर्माता कम्पनियों और उपभोक्ताओं के लिए भी लाभदायक होगी, क्योंकि कम्पनियों की रिपोर्टिंग सिस्टम तक बिना किसी परेशानी के पहुंच कायम होगी, जबकि उपभोक्ताओं की पहुंच समग्र मूल्य संबंधी आंकड़ों तक होगी, ताकि वे किफायती फैसले के बारे में सुविज्ञ निर्णय ले सकें।

बाजार आधारित मूल्य निर्धारण : अनुसूचित औषधियों के सीलिंग मूल्यों का निर्धारण किसी ऐसे नुस्खे (फॉर्मुलेशन) के सभी ब्रांड्स के साधारण औसत मूल्य के आधार पर किया जाता है, जिनका बाजार में एक प्रतिशत और उससे अधिक अंश है। यदि कम्पनी किसी एक नुस्खे को एक से ज्यादा ब्रांड के नाम से बेचती है, तो उसकी बाजार में हिस्सेदारी तय करने के लिए उन सभी ब्रांड्स के शेयरों के कुल योग को ध्यान में रखा जाएगा। सीलिंग मूल्य प्राप्त करने के लिए फुटकर विक्रेता के मार्जिन के रूप में साधारण औसत मूल्य में सोलह (16) प्रतिशत को जोड़ा जाएगा। सीलिंग मूल्य से अधिक दाम पर बेचे जाने वाले ब्रांड्स का मूल्य कम करके उन्हें सीलिंग मूल्य तक लाने की आवश्यकता होगी, लेकिन जो इससे कम में बेचे जा रहे हैं, उन्हें मूल्य को वर्तमान स्तर पर बनाए रखना होगा। सीलिंग मूल्य में स्थानीय करों को शामिल करके अधिकतम खुदरा मूल्य (एमआरपी) प्राप्त किया जा सकता है।

एनपीपीए द्वारा अधिसूचित मूल्य लागू करना : एनपीपीए द्वारा अधिसूचित मूल्य, अधिसूचना जारी होने वाली तिथि से ही तत्काल लागू हो जाते हैं। दूसरे शब्दों में, उस तिथि के बाद निर्मित होने वाली किसी भी खेप में संशोधित एमआरपी अवश्य होनी चाहिए। बाजार में मौजूदा संशोधित एमआरपी लागू होने से पहले के स्टॉक के लिए निर्माता को यह सुनिश्चित करना होगा कि वह उस स्टॉक वापस मंगवाये जाएं और उस पर नया एमआरपी छापकर उस स्टॉक को बाजार में दोबारा जारी किया जाए। वैसे, इस दौरान उपभोक्ता वर्तमान अधिसूचित मूल्य अथवा छपे हुए मूल्य, दोनों में से जो भी कम हो, पर औषधि प्राप्त कर सकता है। इसे कारगर रूप से लागू करने के लिए, रिपोर्टिंग का प्रवर्तन और प्रदर्शित अपेक्षाओं को कड़ाई से लागू करना होगा।

वार्षिक मूल्य वृद्धि : अनुसूचित औषधियों और गैर–अनुसूचित औषधियों, दोनों के संदर्भ में वार्षिक मूल्य वृद्धि की अनुमति है। अनुसूचित औषधियों के संदर्भ में, एमआरपी पर, औद्योगिक नीति एवं संवर्द्धन विभाग द्वारा अधिसूचित पिछले वर्ष के थोक मूल्य सूचकांक (डब्ल्यूपीआई) के प्रतिशत जितनी वार्षिक मूल्य वृद्धि किये जाने की अनुमति है, बशर्ते कि कम्पनी द्वारा राष्ट्रीय औषध मूल्य निर्धारण प्राधिकरण (एनपीपीए) को वही अधिसूचित किया जा रहा हो। यदि डब्ल्यूपीआई नकारात्मक है, मूल्यों को कम करके उसी स्तर तक लाना होगा। गैर–अधिसूचित औषधियों के मामले में, एमआरपी पर 10 प्रतिशत से अधिक वार्षिक मूल्य वृद्धि किये जाने की अनुमति नहीं है।

अनुसूचित नुस्खों की उपलब्धता की निगरानी : एनपीपीए अनुसूचित नुस्खों और अनुसूचित नुस्खों में निहित एपीआई की उपलब्धता की निगरानी के लिए उत्तरदायी है। अनुसूचित नुस्खों और अनुसूचित नुस्खों में इस्तेमाल किये गये एपीआई के सभी निर्माताओं को अपने उत्पादन, आयात और अनुसूचित/एनएलईएम औषधि की बिक्री के बारे में एनपीपीए को निर्धारित प्रारूप में तिमाही रिपोर्ट देनी होगी। उत्पादन बंद करने के इच्छुक अनुसूचित नुस्खों के किसी भी निर्माता को कम से कम छह महीने पहले सार्वजनिक नोटिस जारी करना होगा और ऐसा कदम उठाने का कारण बताते हुए एपीपीए से इसकी अनुमति भी लेनी होगी। एनपीपीए इस उद्देश्य के लिए पारदर्शक दिशा–निर्देशों का अनुसरण करता है।

बाजार पर चंद कम्पनियों का नियंत्रण : देश में 10,000 से ज्यादा औषधि निर्माता होने के बावजूद यहां बाजार पर चंद कम्पनियों का नियंत्रण है। एमएटी के करीब 96 प्रतिशत के लिए शीर्ष 100 कम्पनियां उत्तरदायी हैं। लघु इकाइयों की भूमिका कमोबेश बिना ब्रांड वाली जेनरिक औषधियों के उत्पादन और मझोले एवं बड़े निर्माताओं के लिए ब्रांडेड–जेनरिक औषधियों के अनुबंधित उत्पादन तक ही सीमित है। वर्ष 2014 के एक अध्ययन के अनुसार, 94 प्रतिशत अनुसूचित नुस्खे, जिनका सीलिंग मूल्य नियत किया जा चुका है, पर मार्किट लीडर का अंश 25 प्रतिशत से ज्यादा है, और 67 प्रतिशत में, 50 प्रतिशत से ज्यादा है। बहुत से मामलों में मार्किट लीडर, मूल्य लीडर भी है। ये सभी तथ्य देश के औषधि निर्माण क्षेत्र में मौजूद बाजार की खामियों की ओर संकेत करते हैं।

नयी औषधि : किसी अनुसूचित औषधि का वर्तमान निर्माता उसे किसी अन्य अनुसूचित अथवा गैर–अनुसूचित औषधि के साथ मिश्रित करके अथवा अनुसूचित औषधि की खुराक अथवा ताकत अथवा दोनों को बदलकर नयी औषधि का प्रारम्भ करता है, तो उसे इस औषधि को बाजार में उतारने से पहले एनपीपीए से अनुमति लेनी होगी। नयी औषधि के मूल्य का निर्धारण, नयी औषधि के पहले से बाजार में उपलब्ध होने की स्थिति में, मौजूदा ब्रांड्स के साधारण औसत मूल्य अथवा प्रस्तावित मूल्य, जो भी कम हो, को प्राप्त करके, अथवा औषधि के अब तक बाजार में उपलब्ध न होने पर किसी विशेषज्ञ समूह द्वारा कराये गये फॉर्माकोइकॉनोमिक्स अध्ययन के आधार पर किया जाएगा।

निश्चित औषधि मिश्रण : भारत में अधिकांश नयी औषधियां निश्चित औषधि मिश्रणों (एफडीसी) वाली हैं, जिनमें दो अथवा अधिक एपीआई का मिश्रण शामिल होता है। नतीजतन, यहां अन्य देशों की तुलना में बहुत अधिक एफडीसी मौजूद हैं। इतना ही नहीं, लांच से पहले से उसके उपचारात्मक महत्व का उचित प्रदर्शन नहीं किया जाता। हाल ही में, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय और औषध महानियंत्रक भारत, (डीसीजीआई) ने एफडीसी के संदर्भ में निर्माण का लाइसेंस प्रदान करने के विषय में सभी राज्य औषधि नियंत्रकों (एसडीसी) के लिए दिशा–निर्देश जारी किये हैं। कानून के अनुसार, नयी औषधि के निर्माण का लाइसेंस जारी करने के लिए केंद्रीय लाइसेंसिंग प्राधिकरण (सीएलए) एकमात्र सक्षम प्राधिकरण है, और औषधि के चार साल पुराना होने पर ही राज्य लाइसेंसिंग प्राधिकरण (एसएलए) औषधि एवं कॉस्मैटिक्स अधिनियम, 1940 के तहत लाइसेंस प्रदान कर सकता है, लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ एसडीसी द्वारा इसका उल्लंघन किया गया है। देश में एफडीसी की समीक्षा और अतार्किक एफडीसी को हटाने के लिए एक केंद्रीय समिति का गठन किया गया है।

> **अनुच्छेद 19 :** डीपीसीओ 2013 का अनुच्छेद 19 एनपीपीए को असामान्य परिस्थितियों में, जनहित में आवश्यक समझे जाने पर, किसी भी औषधि के सीलिंग मूल्य/एमआरपी को निर्धारित/संशोधित करने की अनुमति देता है। एनपीपीए ने जुलाई 2014 में इस प्रावधान को लागू करते हुए मधुमेह और हृदय रोग के उपचारात्मक समूहों से सम्बद्ध 108 नुस्खों के एमआरपी पर सीमा लगा दी थी। इन दोनों उपचारात्मक समूहों के अत्यधिक प्रचलन में होने की वजह से एनपीपीए को इनमें हस्तक्षेप करना पड़ा। आज देश में मधुमेह रोगियों की तादाद छह करोड़ से भी ज्यादा है और इसकी वजह से हर साल 10 लाख से भी ज्यादा मौते हो जाती हैं। इसी तरह करीब 10 प्रतिशत आबादी हृदय रोगों से पीड़ित हैं और 25–29 आयु वर्ग में 25 प्रतिशत मौतें इन्हीं की वजह से होती हैं। इससे अनुमानित तौर पर 350 करोड़ रुपये कुल वित्तीय राहत मिली।

मूल्य नियंत्रण से छूट : पेंटेंट वाली औषधियों, प्रक्रिया अथवा उत्पाद, स्वदेशी अनुसंधान एवं विकास के माध्यम से विकसित और नए डिलिवरी सिस्टम के साथ स्वदेशी अनुसंधान एवं विकास से विकसित, दोनों को व्यावसायिक उत्पादन शुरू होने की तिथि से लेकर 5 वर्ष की अवधि के लिए मूल्य नियंत्रण से छूट है। निर्माता को इस उद्देश्य के लिए एनपीपीए से विशेष तौर पर छूट प्राप्त करनी पड़ती है।

गैर–अनुसूचित औषधियों की निगरानी : एनपीपीए गैर–अनुसूचित औषधियों के मूल्यों की निगरानी करता है। साथ ही साथ उन्हें उचित स्तर पर भी बनाए रखता है। हालांकि गैर–अनुसूचित औषधियां प्रत्यक्ष मूल्य नियंत्रण के दायरे में नहीं आतीं, इसके बावजूद उनके मूल्यों में सालाना 10 प्रतिशत (एमआरपी से एमआरपी) से अधिक वृद्धि नहीं की जा सकती।

अनुसूचित एवं गैर–अनुसूचित नुस्खों के मूल्य प्रदर्शित करना : डीपीसीओ 2013 में प्रत्येक औषधि निर्माता के लिए पैक पर एमआरपी प्रदर्शित करने और डीलर्स, एसडीसी और एनपीपीए को मूल्य सूची जारी के विशिष्ट प्रावधान किये गये हैं। इसी तरह, प्रत्येक फुटकर विक्रेता को भी विशिष्ट जगह पर औषधियों के मूल्य प्रदर्शित करने होते हैं। इसके अलावा, एनपीपीए अनुसूचित/एनएलईएम औषधियों के लिए विशिष्ट चिन्ह शुरू करने का प्रयास कर रहा है, ताकि उपभोक्ता आसानी से एनएलईएम औषधि की पहचान कर सकें, जो प्रभावी और सस्ती दोनों प्रकार की होती है।

जनता को जागरूक बनाना : भारत में डॉक्टर और मरीज के बीच सूचनाओं की बेहद असमानता है। इसके लिए मुख्य रूप से मानक उपचार दिशानिर्देशों का अभाव, औषधि निर्माण कम्पनी द्वारा लेबल संबंधी अनिवार्यताओं का दुरुपयोग और आपूर्तिकर्ता से प्रेरित (डॉक्टरों को प्रभावित करके) औषधि की मांग जैसे कारण उत्तरदायी हैं। एनपीपीए उपभोक्ता मामलों संबंधी विभाग के सहयोग से मरीजों को शिक्षित एवं सशक्त बनाने के लिए अभियान चला रहा है, ताकि वे किफायती उपचार के बारे में सुविज्ञ निर्णय ले सकें।

जेनरिक–जेनरिक बनाम ब्रांडेड जेनरिक : जेनरिक औषधि, औषधीय एवं उपचारात्मक रूप से ब्रांडेड औषधि के बराबर होती है जिसका आशय है कि वह खुराक, ताकत, प्रदर्शन और इस्तेमाल के मामले में ब्रांडेड औषधि जैसा ही काम करती है और गुणवत्ता एवं सुरक्षा मानकों के संदर्भ में भी ब्रांडेड औषधि के ही समान होती है। खोज संबंधी लागत न होने (प्रतिरूपित औषधि होने के नाते) और जबर्दस्त प्रतिस्पर्धा होने की वजह से जेनरिक औषधि की लागत ब्रांडेड औषधि के मुकाबले नाममात्र की होती है। जेनरिक औषधियां किफायती और चिकित्सकीय रूप से प्रभावी होती हैं, इसलिए ज्यादातर देशों ने इन्हें बढ़ावा देने के लिए प्रभावी कदम उठाये हैं। मिसाल के तौर पर अमरीका में, जहां मूल्य नियंत्रण नहीं है, जेनरिक औषधियों की बदौलत औषधियों पर होने वाले खर्च में महत्वपूर्ण कमी आयी है। वर्ष 2013 में, अमरीका में औषधियों पर कुल खर्च करीब 325 बिलियन अमरीकी डॉलर (प्रति व्यक्ति खर्च करीब 1000 अमरीकी डॉलर सालाना) था। उपयोग की गई 84 प्रतिशत औषधियां जेनरिक थीं और मात्र 16 प्रतिशत ब्रांडेड अथवा पेंटेंट वाली औषधियां थीं। जेनरिक औषधियां, मूल्य के मात्र 26 प्रतिशत के लिए उत्तरदायी हैं जबकि ब्रांडेड औषधियां मूल्य के 72 प्रतिशत के लिए उत्तरदायी हैं। बहुत से देशों में जेनरिक स्पर्धा के कारण औषधि निर्माण संबंधी खर्च की औसत सालाना वृद्धि में सही मायनों में कमी आयी है। भारत में, बिना ब्रांड वाली जेनरिक औषधियों का अंश ज्यादा महत्वपूर्ण नहीं है, लेकिन नये जन औषधि अभियान से जेनरिक औषधियों को मुख्यधारा में लाते हुए जबर्दस्त बदलाव लाए जाने की सम्भावना है, ऐसा होने पर औषधियां बेहद किफायती हो जाएंगी।

जेनरिक औषधियों को बढ़ावा : जेनरिक औषधियों को बढ़ावा देने के लिए कई तरह के उपाय किये जाने की जरूरत है। प्रथम, ऐसे सहयोगपूर्ण कानून की जरूरत है, जो प्रसक्रिप्शन्स में जेनरिक नाम लिखने को अनिवार्य बनाए, औषधि विक्रेता द्वारा जेनरिक अंशदान के लिए कानूनी आधार उपलब्ध कराया जाए, औषधियों के लिए कड़ी लेबलिंग आवश्यकताओं को निर्दिष्ट किया जाए। दूसरा, औषधि की गुणवत्ता परीक्षण क्षमता और औषधि आउटलेट निरीक्षण क्षमता को बेहतर बनाते हुए गुणवत्ता आश्वासन क्षमता में वृद्धि की जाए। तीसरा, जेनरिक औषधियों के संदर्भ में व्यावसायिक एवं सार्वजनिक स्वीकृति दी जाए। चौथा, औषधियों के मूल्यों के संबंध में सूचना का प्रसार सुनिश्चित किया जाए और पांचवां, संदर्भ मूल्य निर्धारण एवं प्रतिपूर्ति नीतियों, खुदरा मूल्य नियंत्रणों एवं जेनरिक औषधियों के निर्माण को बढ़ावा देने के लिए औषधि निर्माण उद्योग को प्रोत्साहन देने जैसे आर्थिक उपकरणों के माध्यमों का इस्तेमाल किया जाए।

अधिप्रभार : जहां औषधि को अधिसूचित/स्वीकृत मूल्य से अधिक दाम पर बेचा जाता है, तो वहां अधिप्रभार लागू होता है। अधिप्रभारित राशि की ब्याज सहित वसूली की जाती है। नयी औषधि के मामले में, जहां एनपीपीए द्वारा विशिष्ट तौर पर पूर्व मूल्य स्वीकृति प्रदान की गई है, वहां जुर्माना (अधिप्रभारित राशि और ब्याज के अतिरिक्त) लगाने का भी प्रावधान है। डीपीसीओ 1995 और 2013 के अंतर्गत, उनके प्रारम्भ से, अधिप्रभार के हजार से अधिक मामले दर्ज किये गये हैं, जिनकी कुल मांग करीब 4000 करोड़ रुपये हैं, जिसमें से अब तक मात्र 10 प्रतिशत की ही वसूली हो सकी है और शेष राशि विवादित है। पिछले वित्तवर्ष के दौरान, करीब 100 करोड़ रुपये की वसूली की गई।

चिकित्सा उपकरण : स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने औषधि एवं कॉस्मैटिक्स अधिनियम, 1940 के अंतर्गत 22 चिकित्सा उपकरणों को अधिसूचित किया है। वर्तमान में, परिवार नियोजन उपकरणों के अलावा, शेष मूल्य नियंत्रण के अंतर्गत नहीं हैं। कार्डिक स्टेंट्स और ऑर्थोपीडिक इंप्लांट्स जैसे चिकित्सा उपकरणों को मूल्य नियंत्रण के दायरे में लाने पर व्यापक रूप से विचार किया जा रहा है।

संस्थागत बिक्री : कुछ महंगी औषधियां खुदरा बाजार में उपलब्ध नहीं हैं और वे सीधे तौर पर अस्पतालों और नर्सिंग होम्स को बेची जाती हैं। सामान्य तौर पर यह देखा गया है कि ये औषधियां अस्पतालों/नर्सिंग होम्स को भारी छूट/रिबेट पर बेची जाती हैं, जिनका लाभ उपभोक्ता को विरले ही मिलता है। बेबस मरीजों का शोषण रोकने के लिए इस क्षेत्र पर फौरन ध्यान दिये जाने की जरूरत है।

निष्कर्ष : एनपीपीए एक स्वतंत्र औषधि मूल्य नियामक है, जो सभी को आवश्यक एवं जीवनरक्षक औषधियां किफायती दामों पर उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

(अध्यक्ष, राष्ट्रीय औषध मूल्य निर्धारण प्राधिकरण)
(अनुवाद : रीता कपूर)

आदिवासियों की सेहत सुधारना सरकार की प्राथमिकता

–धनजी चौरसिया

आज भी तमाम आदिवासी इलाकों में न तो स्वास्थ्य सुविधाओं का विकास हुआ है और न ही आदिवासियों का स्वास्थ्य सुदृढ़ है। वे एनीमिया तथा कुपोषण जैसी समस्याओं से ग्रस्त हैं। सरकारी आंकड़ों में आदिवासी समुदाय के पोषण, चिकित्सा आदि के नाम पर बड़ी रकम खर्च की जाती रही है। लेकिन अभी तक सेहत सुधार के मामले में वे पीछे हैं। यही वजह है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की ओर से इस मुद्दे पर विशेष तौर पर गंभीरता दिखाई गई है। पिछले दिनों आदिवासियों की सेहत सुधार की दिशा में प्रधानमंत्री ने नए सिरे से पहल करने की जरूरत बतायी है ताकि अभी तक हाशिए में रहने वाले देशभर के आदिवासियों को भी समुचित स्वास्थ्य सुविधाएं मिल सकें।

देश के विभिन्न हिस्सों में रह रहे आदिवासी समुदाय के लोग बदइंतजामी की वजह से भूख, कुपोषण, बीमारी से लड़ रहे हैं। आदिवासी–बहुल इलाके में तमाम नवजात एवं प्रसूताएं कुपोषण की शिकार हैं। इस चिंताजनक स्थिति को देखते हुए पिछले दिनों प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने ऐलान किया है कि आदिवासियों के स्वास्थ्य एवं पोषण की समुचित व्यवस्था की जाएगी। उम्मीद की जा रही है कि आगामी बजट में आदिवासियों के लिए चलाए जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों के साथ ही उनके स्वास्थ्य सुधार की दिशा में कोई न कोई नया कार्यक्रम घोषित हो सकता है। क्योंकि प्रधानमंत्री का मानना है कि आदिवासियों के पोषण के लिए जो इंतजाम होने चाहिए थे, वह अभी तक नहीं हो पाए हैं। इस वजह से आदिवासी–बहुल इलाके में चलने वाले आंगनबाड़ी केंद्रों पर विशेष निगरानी रखने के निर्देश दिए गए हैं। इतना ही नहीं इन केंद्रों पर पोषक तत्वों से भरपूर पोषाहार देने का भी निर्देश दिया गया है। राजस्थान, मध्य प्रदेश सहित वे सभी राज्य भी इस दिशा में अग्रसर हैं, जहां आदिवासी–बहुल आबादी है। प्रधानमंत्री की गंभीरता के बाद राज्य सरकार ने कुपोषण को दूर करने के लिए सरकार की ओर से पोषण आहार उपलब्ध कराने को अपनी प्राथमिकता में शामिल किया हैं। राज्यसभा में एक सवाल के लिखित जवाब में जनजातीय कार्य राज्यमंत्री मनसुखभाई धांजीभाई वसावा ने बताया कि केंद्र सरकार ने विभिन्न हस्तक्षेपों के माध्यम से पूरे देश में जनजातीय लोगों के संपूर्ण विकास की रणनीति बनाई है। इसमें उनकी शिक्षा के साथ ही स्वास्थ्य एवं स्वच्छता पर विशेष जोर दिया जा रहा है। इसके साथ ही उनकी आर्थिक स्थिति सुधारने की दिशा में भी प्रयास किया जा रहा है। विकास गतिविधियों का मुख्य भाग संबंधित केंद्रीय मंत्रालयों तथा राज्य सरकारों की विभिन्न योजनाओं/कार्यक्रमों के माध्यम से किया जाता है, जबकि जनजातीय कार्य मंत्रालय महत्वपूर्ण अंतर को कम करके इन पहलों में अपना योगदान देता है। नीति आयोग (पूर्व के योजना आयोग) ने जनजातीय लोगों के संपूर्ण विकास को ध्यान में रखते हुए राज्यों/संघशासित क्षेत्रों तथा केंद्रीय मंत्रालयों/विभागों द्वारा जनजातीय उपयोजना (टीएसपी) के कार्यान्वयन के लिए वर्ष 2014 के दौरान संशोधित दिशानिर्देश जारी किए हैं। इस साल इसे और बेहतर तरीके से लागू किया जा रहा है। सरकार की कोशिश है कि आदिवासी इलाके में स्थित प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों को सुदृढ़ किया जाए। क्योंकि आदिवासी इलाकों में तमाम स्वास्थ्य केंद्रों में संसाधनों का अभाव है। कई स्थानों पर चिकित्साधिकारी व चिकित्सा स्टाफ की

कमी है। ऐसे में राज्य सरकार से गुजारिश की गई है कि वे चिकित्सकों एवं चिकित्सा अधिकारियों की तैनाती में इस बात का ध्यान रखें कि आदिवासी इलाके में स्थित स्वास्थ्य केंद्र बंद न होने पाएं। राज्य सरकारों की ओर से भी इस दिशा में पहल की जा रही है। उम्मीद की जानी चाहिए कि इस पहल का सकारात्मक नतीजा निकलेगा।

आंकड़ों पर गौर करें तो पूर्व के योजना आयोग के अनुमान के अनुसार 2011–12 के दौरान राष्ट्रीय स्तर पर ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले अनुसूचित जनजाति के लोग 45.3 फीसदी थे। अनुसूचित जनजाति के विकास के लिए महिला एवं बाल विकास मंत्रालय की एकीकृत बाल विकास सेवाएं (आईसीडीएस), स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय का राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम), मानव संसाधन और विकास मंत्रालय की मध्याह्न भोजन योजना, पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय का पेयजल एवं संपूर्ण स्वच्छता अभियान तथा खाद्य एवं जन संवितरण विभाग की लक्षित जन संवितरण प्रणाली आदि के जरिए भी आदिवासी इलाके में वरीयता के आधार पर कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। शौचालयों के निर्माण, स्कूल के बच्चों में स्वच्छ आदतों, प्रदूषण को कम करने के लिए दोबारा बनाई जाने वाली सामग्री का उपयोग करने, आयरन फोलिक एसिड की अनुपूर्ति तथा बच्चों में कृमिनाशी आदि उपलब्ध कराए जा रहे हैं। इतना ही नहीं जनजातीय कल्याण निधि के अंतर्गत आदिवासी–बहुल इलाके के स्कूलों में अतिरिक्त पोषाहार वितरण एवं क्षय निवारण योजना के तहत दवाओं के वितरण का भी कार्यक्रम चलाया जा रहा है। इसके बाद भी तमाम आदिवासी इलाकों में अभी तक वे सुविधाएं उपलब्ध नहीं हो पाई हैं, जिसकी जरूरत है। पिछले दिनों आदिवासियों तक स्वास्थ्य सेवाएं पहुंचाने, आदिवासियों की बीमारियां दूर करने और आदिवासी कल्याण में संलग्न संस्थाओं की क्षमता बढ़ाने जैसे मुद्दों को लेकर भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद और जनजातीय कार्य मंत्रालय की ओर से कार्यशाला का आयोजन किया गया था। इसमें भी यह महसूस किया गया कि आदिवासियों के स्वास्थ्य सुविधाओं के विस्तार की जरूरत है। इस कार्यशाला में विशेषज्ञों ने मलेरिया नियंत्रण के महत्व को रेखांकित किया, जिसका प्रकोप अन्य आबादी की तुलना में आदिवासियों में अधिक है। इस दौरान यह बात सामने आई कि आदिवासियों की संख्या देश की आबादी का सिर्फ 8.6 प्रतिशत है लेकिन मलेरिया के मामले 30 प्रतिशत और मलेरिया के कारण मौत के मामले 50 प्रतिशत हैं। अनेक आदिवासी इलाकों में फालसिपैरम की घटना 90 प्रतिशत या उससे भी अधिक है।

इस कार्यशाला में जच्चा–बच्चा स्वास्थ्य, पोषाहार, मलेरिया, एनीमिया और टीबी जैसे विशिष्ट विषयों पर ध्यान दिया गया। कार्यशाला में उपस्थित विशेषज्ञों की राय थी कि आदिवासी क्षेत्रों में मलेरिया पर काबू पाने के लिए पारंपरिक उपाय करने वालों को मलेरिया की औषधियों के बारे में प्रशिक्षण दिया जा सकता है। इसी तरह मच्छरों को बढ़ने से रोकने के लिए तालाबों में कम्पोजिट फिश कल्चर की सिफारिश की गई है। इस दौरान विशेषज्ञों ने कहा कि पिछले एक दशक से भी अधिक समय में किए गए अनुसंधानों से पता चला है कि कई छोटे और किफायती उपायों के बल पर स्वास्थ्य से जुड़े उन जोखिमों में काफी कमी लाई जा सकती है जिन जोखिमों का महिलाएं गर्भवती होने के बाद सामना करती हैं। गर्भावस्था, बच्चे के जन्म के समय और इसके शीघ्र बाद गुणवत्तापूर्ण प्रसव–पूर्व स्वास्थ्य सुविधा केन्द्र (एएनसी) तक महिलाओं की पहुंच कायम करके माताओं को अधिकांश मौतों से बचाया जा सकता है। गुणवत्तापूर्ण एएनसी में शामिल हैं–गर्भवती माताओं का शुरुआती पंजीकरण और पहले तीन माह में शारीरिक और उदर मांसपेशी की जांच, हिमोग्लोबीन का अनुमान तथा मूत्र जांच, टिटनेस रोग प्रतिरक्षण की दो खुराक और 100 दिनों के लिए आयरन फॉलिक एसिड (आईएफए) की गोलियां आदि। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण–3 (एनएफएचएस–3) के अनुमान के अनुसार अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के लिए चिकित्सक की सेवा पाने की प्रतिशतता केवल 32.8 है जबकि यह अखिल भारतीय स्तर पर 50.2 प्रतिशत और अनुसूचित जाति के लिए 42 प्रतिशत है। गर्भवती माताओं के लिए रोग प्रतिरक्षण की मुफ्त सुविधा प्रदान करने के बावजूद केवल 32.4 प्रतिशत (सभी सामाजिक समूहों में सबसे कम) अनुसूचित जनजाति की महिलाओं ने ही यह सुझाव प्राप्त किए कि गर्भावस्था की जटिलताओं का अनुभव करने पर उन्हें कहां जाना चाहिए।

इसी तरह मध्य प्रदेश के रीजनल मेडिकल रिसर्च सेंटर फार ट्राईबल की अध्ययन रिपोर्ट में बताया गया है कि सहरिया समुदाय के 93.5 प्रतिशत बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। सहरिया समुदाय की 58 प्रतिशत से अधिक महिलाएं एनीमिया सहित विभिन्न बीमारियों की शिकार हैं जिसके कारण नवजात बच्चे कुपोषित होते हैं। यह कुपोषण ही सहरिया समुदाय के नवजात बच्चों की सर्वाधिक मौत का बड़ा कारण बनता है। क्योंकि जब स्तनपान कराने वाली मां को ही पोषक तत्व नहीं मिलता है तो ऐसे में वह अपने बच्चे की समुचित देखभाल कहां कर सकती है। ऐसे में उसके बच्चे के पोषित होने की तो कल्पना ही नहीं की जा सकती है। यही वजह है कि नवजात बच्चे कुपोषित होते हैं और समय पर उपचार न मिलने के कारण उनकी मृत्यु हो जाती है। इसी तरह पिछले दिनों राजस्थान के बारां जिले में 12 दिनों में कथित तौर पर कुपोषण से तीन बच्चों की मौत की खबर आई। इसी प्रदेश के आदिवासी–बहुल किशनगंज और शाहबाद कुपोषण से मौतों को लेकर सुर्खियां बनते रहे हैं। वर्ष 2002 में किशनगंज के ब्रह्मपुरा गांव में ऐसी मौत के दर्जन भर मामले सामने आए

थे। वर्ष 2012 में किशनगंज के करीरियां गांव में पांच कुपोषित बच्चों की मौत पर भी हंगामा मचा था।

वास्तव में आदिवासी समुदाय प्राचीनकाल से ही जंगलों में निवास करते हुए प्रकृति के नजदीक रहे हैं। ये अपने खाद्य पदार्थ में कोदो, कुटकी, तेंदू, महुआ, गोंद, फाग,पमार, बेर, सहजन, आंवला सहित वह तमाम चीजें शामिल किए रहे हैं, जिनका आयुर्वेद की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान रहा है, लेकिन धीरे–धीरे जंगल कटते गए। आदिवासी समुदाय के खाद्य में शामिल मूल फल के पेड़ नष्ट हो गए और वहां आबादी बस गई। ऐसी स्थिति में उनके आहार में परिवर्तन हुआ। पारंपरिक फसलें खनिज पदार्थों, प्रोटीन और विटामिनों से समृद्ध होती थीं लेकिन वे अब विलुप्त हो चुकी हैं और उनके स्थान पर उच्च कार्बोहाइड्रेट वाली फसलों ने ले ली है। जबकि कुपोषण से निपटने के लिए हरी पत्तीदार सब्जियों की खेती और उपभोग जरूरी है। ऐसी स्थिति में आदिवासी समुदाय रासायनिक एवं कीटनाशक दवाओं से युक्त खाद्यान्न तो ग्रहण करने लगे, लेकिन उनके इलाके में इलाज के माकूल इंतजाम नहीं हो सके। ऐसी स्थिति में उनके बीमार होने पर दवाएं नहीं मिल पाती। अभी भी आदिवासी समुदाय प्रसव के लिए परंपरागत साधन अपनाता है, जिसकी वजह से तमाम नवजात बच्चे और प्रसूता की मौत हो जाती है। इसके पीछे मूल कारण आदिवासी इलाके में चिकित्सकीय सुविधाओं का अभाव है। शिक्षा का अभाव और जागरुकता की कमी, उनके दूरदराज के अस्पतालों तक पहुंचने में बाधा है।

सच तो यह है कि आदिवासियों के सेहत की अनदेखी सिर्फ भारत ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया में हुई है। पिछले अंतर्राष्ट्रीय आदिवासी दिवस नौ अगस्त को ब्रिटेन स्थित हेल्थ अनलिमिटेड और लंदन स्कूल ऑफ हाइजिन एंड ट्रापिकल मेडिसिन की ओर से तैयार की गई एक रिपोर्ट में बताया गया है कि आदिवासियों को अब भी साफ पेयजल उपलब्ध नहीं है, और न ही उनके लिए पर्याप्त स्वास्थ्य सुविधाएं हैं। सुदूरवर्ती इलाकों में रहने वाले आदिवासी खुद को उपेक्षित और हाशिए पर छूटा हुआ महसूस करते हैं। इस तरह देखा जाए तो आदिवासी बच्चों एवं माताओं में कुपोषण की समस्या आम है। लेकिन जब तक ये बच्चे कुपोषण का शिकार हैं, विकास सम्भव नहीं है। आदिवासी बच्चों में कुपोषण की इस गम्भीर समस्या का समाधान करने के लिए सभी मंत्रालयों एवं विभागों को एकजुट होकर प्रयास करना होगा। यूनिसेफ ने भी आदिवासी समुदाय के बच्चों में कुपोषण को बड़ी चुनौती माना है। घरेलू भोजन एवं आजीविका की सुरक्षा, समेकित बाल विकास सेवाएं, स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच एवं रेफरल, पेयजल और स्वच्छता आदि आदिवासी क्षेत्रों में बेहतर बनाने की जरुरत है।

राज्य सरकारों का प्रयास

सरकार की ओर से आदिवासियों को कुपोषण से बचाने के लिए राज्य–स्तर पर भी तमाम प्रयास किए गए हैं। राजस्थान ने गंभीर कुपोषण से पीड़ित बच्चों के लिए सूखे की आशंका वाले जिलों में विशेष कुपोषण उपचार केंद्रों की स्थापना की है। झारखण्ड और छत्तीसगढ़ में उन आदिवासी बच्चों के लिए क्रेच के विभिन्न मॉडल पेश किए गए हैं, जिनकी माताएं काम के लिए लम्बे समय तक घर से बाहर रहती हैं। आदिवासी महिलाओं में पोषण के स्तर में सुधार लाने के लिए आंध्र प्रदेश की पूर्ण भोजन योजना इस दिशा में एक उल्लेखनीय पहल है।

वन बंधु कल्याण योजना

केंद्र सरकार की ओर से चल रही इस योजना के जरिए आदिवासियों की स्थिति सुधारने की कोशिश की जा रही है। इसके लिए सरकार की ओर से 100 करोड़ रुपये आवंटित किए गए हैं। केंद्र सरकार ने आदिवासी परिवारों के लिए बेहतर और सतत् रोजगार, ढांचागत खामियों को खत्म करने, शिक्षा और स्वास्थ्य की गुणवत्ता में सुधार और आदिवासी क्षेत्रों में जीवन में सुधार पर विशेष ध्यान देने का प्रस्ताव किया है। यह योजना आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, तेलंगाना, ओडिशा, झारखंड, छत्तीसगढ़, राजस्थान, महाराष्ट्र और गुजरात राज्यों के एक–एक प्रखंड में पायलट आधार पर शुरू की गई है। इस योजना के तहत केंद्र, आदिवासियों के लिए विभिन्न सुविधाओं के विकास हेतु प्रत्येक प्रखंड को 10 करोड़ रुपये प्रदान कर रहा है। इन प्रखंडों का चयन संबद्ध राज्यों की सिफारिशों पर किया गया है और इनमें शिक्षा दर बहुत कम है। अनुसूची 5 क्षेत्र में करीब 350 प्रखंड हैं जहां कुल जनसंख्या की तुलना में जनजातीय लोगों की जनसंख्या 50 प्रतिशत या अधिक है। वर्ष 2014–15 के दौरान योजना के तहत सीमित वित्तीय संसाधन प्रदान कर 10 अनुसूचित पांच राज्यों के एक–एक ब्लॉक में पायलट परियोजना को कार्यान्वयन का लक्ष्य रखा गया। इसके अलावा पांचवीं अनुसूची के बाहर एक ऐसे प्रखंड में भी परियोजना लागू की जा सकती है, जहां पर आदिवासियों की जनसंख्या अधिक हो तथा कम एचडीआई हो। कुल 100 करोड़ रुपये में से प्रत्येक ब्लॉक के लिए 10 करोड़ रुपये निर्धारित किए गए हैं।

संदर्भ

पत्र सूचना कार्यालय, भारत सरकार
मीडिया फार राइट्स की रिपोर्ट
इंडिया वाटर पोर्टल पर प्रकाशित रिपोर्ट
विभिन्न समाचार पत्रों में समय–समय पर प्रकाशित रिपोर्ट

(लेखक विभिन्न सामाजिक संगठनों से जुड़े हैं। विकासात्मक मुद्दों पर नियमित लेखकीय कार्य में सक्रिय)
ई–मेल : dhanjichaurasiya4@gmail.com

ग्रामीण भारत में स्वास्थ्य योजनाएं एक आकलन

–डॉ. ऋतु सारस्वत

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य कार्यक्रम देश को पूर्ण स्वस्थ बनाने हेतु प्रयासरत है, परन्तु उसकी कमियों को दूर करने के लिए केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने नई स्वास्थ्य नीति 2015 का मसौदा तैयार किया है, उसमें 'स्वास्थ्य का मौलिक अधिकार' देने की बात कही गई है। नई स्वास्थ्य नीति को आशा की किरण के तौर पर देखा जा सकता है जो भारत के स्वास्थ्य मानचित्र पर सकारात्मक परिवर्तन लाएगी।

राष्ट्रपति श्री प्रणब मुखर्जी ने अस्वस्थ भारत के संबंध में अपनी चिंता जाहिर करते हुए कहा कि भारत जैसे विकासशील देश में स्वास्थ्य क्षेत्र के बुनियादी ढांचे की जरुरत है। उन्होंने कहा कि प्रभावी, सस्ती और सुलभ स्वास्थ्य सेवा सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। देश के नीति निर्माताओं के लिए भी यह एक निरंतर चिंता का विषय रहा है। किस प्रकार से देश के प्रत्येक नागरिक तक स्वास्थ्य सुविधाएं पहुंचाई जाएं चूंकि भारत की सत्तर प्रतिशत जनसंख्या आज भी गांवों में निवास करती है। जहां एक ओर शिक्षा की कमी आड़े आ रही है तो वहीं दूसरी ओर दुर्गम स्थलों तक पहुंचना चुनौतीपूर्ण है।

ग्रामीण भारत की 'स्वस्थता' के उद्देश्य से विगत दशकों में अनेक प्रयास किए गए हैं चूंकि देश के लोग इसके बहुमूल्य संसाधनों में से एक हैं इसलिए सरकारी सहायता प्राप्त योजनाओं और कार्यक्रमों को केन्द्र सरकार द्वारा नागरिकों के स्वास्थ्य के स्तर को बढ़ाने हेतु प्रस्तावित किया जाता है। भारतीय संविधान के अनुसार, 'स्वास्थ्य' विषय राज्य सरकारों के क्षेत्राधिकार के अंतर्गत आता है। इससे तात्पर्य है कि राज्य सरकारें इसके

क्षेत्राधिकार में रहने वाले लोगों के स्वास्थ्य को बनाए रखने तथा इसमें सुधार हेतु उत्तरदायी होती हैं। केन्द्र सरकार द्वारा मुख्य नीति, ढांचा तथा सहयोग दिया जाता है जबकि राज्य केन्द्र सरकार के स्वास्थ्य संबंधी लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए स्वयं के मॉडल तैयार करते हैं। ग्रामीण भारत की स्वस्थता की महत्वपूर्ण नींव 12 अप्रैल, 2005 को 'राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन' के रूप में रखी गई और इस तरह (एन.आर.एच.एम) 'राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन' पूरे विश्व में स्वास्थ्य क्षेत्रों में किए जाने वाले सबसे बड़े हस्तक्षेपों में से एक बना। एन.आर.एच.एम के जरिए संपूर्ण भारत के 600 मिलियन से अधिक लोगों को प्रभावी स्वास्थ्य देखभाल प्रदान करने का प्रयास किया जा रहा है। इसका उद्देश्य ग्रामीण जनता विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों को न्यायोचित, रियायती, जिम्मेदार और प्रभावी स्वास्थ्य देखभाल उपलब्ध कराना है। इस योजना के तहत् पूर्णतया कार्य कर रही सामुदायिक स्वामित्व की विकेन्द्रित स्वास्थ्य प्रदान करने वाली प्रणाली को विकसित करना है। यह ग्रामीण क्षेत्रों में सुगमता से वहनीय और जवाबदेही वाली गुणवत्तायुक्त स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया कराने से संबंधित है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन, जिन 18 राज्यों में जन–स्वास्थ्य सूचक क्षीण हैं या उनकी अवसंरचना में जनस्वास्थ्य सूचक क्षीण हैं, उन राज्यों पर विशेष ध्यान केन्द्रित करते हुए समस्त देश में ग्रामीण जनसंख्या को स्वास्थ्य की देखरेख के लिए प्रभावी साधन उपलब्ध कराना चाहता है।

किसी भी देश के स्वास्थ्य कार्यक्रम में बचाव और इलाज दोनों का शामिल किया जाना उसकी सफलता के लिए अपरिहार्य है। बचाव संबंधित स्वास्थ्य सेवाएं जैसे टीकाकरण, महामारियों से बचाव और इलाज, स्वास्थ्य बढ़ाना जैसे कि पोषण संबंधी कार्यक्रम और स्वस्थ जीवनशैली को बढ़ावा देना एवं स्वास्थ्य शिक्षा तथा जानकारी, सही प्राथमिक इलाज, सही समय पर अस्पताल भेजना। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन की रूपरेखा में इन सभी तत्वों को सम्मिलित करने का प्रयास किया गया और इसलिए इसके मुख्य

उद्देश्यों को इन्हीं आधार बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए निश्चित किया गया –

- शिशु मृत्यु दर और मातृत्व मृत्युदर में कमी लाना।
- प्रत्येक नागरिक की लोक स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच सुलभ कराना।
- संचारी और असंचारी रोगों की रोकथाम व नियन्त्रण।
- जनसंख्या नियंत्रण के साथ–साथ लिंग व जनसांख्यिकीय संतुलन निश्चित करना।
- स्वस्थ जीवनचर्या और आयुष से वैकल्पिक औषधि पद्धतियों को प्रोत्साहित करना।

शिशु मृत्यु दर और मातृत्व मृत्युदर जैसे संवेदनशील विषयों के लिए पूर्व में प्रयास करने के बावजूद हम वह सफलता प्राप्त नहीं कर पाए जोकि अपेक्षित थी। इसलिए ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के तहत इस ओर कोई कसर न छोड़ने के उद्देश्य से 1 जून, 2011 को जननी सुरक्षा योजना का आरम्भ किया गया। मूलतः इस योजना ने पूर्व में संचालित राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना का स्थान लिया। इस योजना का उद्देश्य चूंकि मातृ मृत्युदर को कम करना एवं जच्चा–बच्चा की सुरक्षा थी। अतः सेवा प्रबन्धकों और गर्भवती महिलाओं के बीच प्रभावी संपर्क बनाने, प्रसव कराने के लिए महिलाओं के साथ प्रसव केन्द्रों पर जाने और उनकी मदद करने के लिए अधिकृत सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की व्यवस्था की गई। इन सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं को ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के एक प्रहरी के रूप में देखा जा सकता है। यह मान्यता प्राप्त सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं और किशोरियों के स्वास्थ्य के लिए काम करती हैं। इसे संक्षेप में 'आशा' नाम दिया है। जनवरी 2013 के आंकड़ों के अनुसार भारत में आशा कर्मियों की कुल संख्या 863506 है।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य कार्यक्रम के एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में 'राष्ट्रीय बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम योजना' भी है। इसमें बच्चों में बीमारियों का जिला–स्तर पर निराकरण करने का लक्ष्य है, जिससे बच्चों में जल्दी बीमारियों का पता लगा कर इलाज किया जा सके।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन चूंकि अपने मूल रूप में बचाव और इलाज दोनों पर कार्य कर रहा है इसलिए सरकार द्वारा करोड़ों रुपये कुपोषण को काबू रखने के उद्देश्य से आवंटित किए जा रहे हैं। यूनिसेफ की रिपोर्ट के अनुसार भारत में पांच साल से कम उम्र के लगभग 10 लाख बच्चे हर साल मर जाते हैं। सरकार द्वारा मिड–डे मील की योजना सभी सरकारी विद्यालयों में इसी उद्देश्य से शुरू की गई है कि देश का हर बालक कुपोषण का शिकार होने से बच सके।

गांव स्वास्थ्य व स्वच्छता कमेटी, राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के अन्तर्गत ग्रामीण जनता के स्वास्थ्य में सुधार के लिए, गांव के ऐसे लोगों का समूह है जो यह समझते हैं कि बेहतर या अच्छा स्वास्थ्य व्यक्ति के संपूर्ण विकास का एक महत्वपूर्ण घटक है। हर 1000 से 1500 की आबादी वाले गांव में एक ग्राम स्वास्थ्य कमेटी बनाई जाती है। इस कमेटी को सरकार की तरफ से हर वर्ष 10,000 रुपये मिलते हैं। इस कमेटी के कार्यों को चार भागों में बांटा जा सकता है–सूचना, निगरानी, कार्यवाही व स्वास्थ्य योजना का निर्माण। कमेटी स्वास्थ्य कार्य के तहत गांव में संभावित बीमारियों की रोकथाम के लिए योजना बनाती है जिससे उनके गांव में बीमारियां न फैलें व लोग बेहतर जीवन की ओर अग्रसर हो सकें।

शिशु और मातृ–मृत्यु दर को कम करना चूंकि ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन का एक अहम् उद्देश्य है इसलिए जननी सुरक्षा योजना के अलावा टीकाकरण योजना पर भी विशेष तौर पर ध्यान दिया जा रहा है। सक्षम आपूर्ति प्रणाली के माध्यम से प्रभावी और सुरक्षित टीकाकरण सबसे प्रभावी लोक स्वास्थ्य योजनाओं में से एक है। टीकाकरण कार्यक्रम का उद्देश्य बच्चों में टीका निवारणीय रोगों के कारण मृत्यु दर और रुग्णता को कम करना है। भारत में टीकाकरण कार्यक्रम, प्रयुक्त टीकों की मात्रा, लाभार्थियों की संख्या, आयोजित टीकाकरण सत्रों की संख्या और कवर किए गए भौगोलिक क्षेत्र के संदर्भ में विश्व में सबसे बड़े कार्यक्रमों में से एक जा रहा है।

जनस्वास्थ्य सहयोग नामक ग्रामीण स्वास्थ्य कार्यक्रम में मध्यस्तरीय स्वास्थ्यकर्मियों को प्राथमिक स्तर पर जिम्मेदारियां संभालने के लिए तैयार किया गया है और स्थानीय ग्रामीणों में से नर्सों को प्रशिक्षित करके स्वास्थ्यकर्मियों की कमी को दूर करने का प्रयास किया है।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन एवं उससे संबंधित कार्यक्रमों के द्वारा ग्रामीण भारत में स्वास्थ्य के स्तर को सुधारने के प्रयासों के बावजूद सफलता का प्रतिशत कम है। उसका सबसे प्रमुख कारण केन्द्र एवं राज्य सरकारों के बीच सामंजस्य का नहीं होना है। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने स्वयं इस कटु सत्य को स्वीकारा है कि भारत सरकार द्वारा स्वास्थ्य सुविधाओं के विकास के पिछले दशक में उठाए गए कदम अपर्याप्त रहे हैं। इस वजह से वर्ष 2000 से 2015 तक के लिए निर्धारित सहस्राब्दि लक्ष्य (मिलेनियम डवलपमेंट गोल) तक भारत नहीं पहुंच सका। इनमें पांच साल से कम उम्र के बच्चों की मृत्यु दर, नवजात शिशु मृत्यु दर और मातृ मृत्यु दर के लक्ष्य को पाने में चूक शामिल है। साथ ही भारत प्रशिक्षित स्वास्थ्यकर्मियों द्वारा प्रसव कराने का लक्ष्य नहीं पा सका है। आज भी 27 प्रतिशत बच्चों का जन्म घरों में

होता है। जन्म लेने वाले प्रति एक लाख बच्चों में से 178 मौत के मुंह में चले जाते हैं। विशेषज्ञों का मानना है कि जितना बजट स्वास्थ्य मद में सरकार द्वारा उपलब्ध कराया जाना चाहिए उसका अपेक्षाकृत मौजूद बजट बहुत कम है। वर्ष 2013–14 के केन्द्रीय बजट में रु. 20,999 करोड़ की राशि राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य योजना के लिए आवंटित की गई थी। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष (आईएमएफ) के अनुसार भारत 2016 तक विकास दर में चीन को पीछे छोड़ देगा परन्तु दुनिया में होने वाली कुल बीमारियों का पांचवां हिस्सा अकेले भारत में होता है। मानव विकास रिपोर्ट ने विश्व के अनुभवों से निष्कर्ष निकालते हुए कहा है कि सब तक अच्छी गुणवत्ता की स्वास्थ्य सेवा पहुंचाना संभव है। रिपोर्ट कहती है कि बजट इतना उपलब्ध रहना चाहिए कि सरकारी स्तर की सेवा की गुणवत्ता में कोई कमी न हो। जननी सुरक्षा केन्द्र के अन्तर्गत बच्चों का जन्म बेहतर स्थितियों में हो, स्वास्थ्य केन्द्र में हो इसके लिए काफी खर्च हुआ है, परन्तु प्राथमिक केन्द्रों में जैसी सुविधाएं होनी चाहिए, उपलब्ध नहीं हो सकीं। गांवों में महिला स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता 'आशा' की नियुक्ति एक बेहतर कदम है। पर आशा को अनुकूल परिस्थितियों और समुचित प्रशिक्षण दिए जाने से जननी सुरक्षा कार्यक्रम को बल मिलेगा।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन की सफलताएं शून्य हैं, ऐसा बिल्कुल नहीं है। चूंकि भारत दुनियों की दूसरी सबसे बड़ी आबादी वाला देश है और इसकी वजह से स्वास्थ्य सेवाओं पर अत्यधिक दबाव है। परन्तु इसके बावजूद शिशु मृत्यु दर में कमी आई है। शिशु मृत्यु दर साल 2005 में जन्में 1 हजार शिशुओं में 58 थी जो 2012 में 42 दर्ज की गई है। मातृ मृत्यु दर में भी कमी दर्ज की गई है। यह 2001–03 में 1 लाख में 301 थी जो 2007–09 में 212 तक आ गई। एक अध्ययन के अनुसार कुछ दशक पहले तक जहां बच्चे को जन्म देते हुए मौत की शिकार हुई महिलाओं की संख्या 75000 थी वहीं 2010 में यह संख्या 50000 दर्ज की गई। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन एवं जननी सुरक्षा योजना की भागीदारी और सार्थक प्रयासों ने उसमें एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य कार्यक्रम देश को पूर्ण स्वस्थ बनाने हेतु प्रयासरत है, परन्तु उसकी कमियों को दूर करने के लिए केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने नई स्वास्थ्य नीति 2015 का मसौदा तैयार किया है, उसमें 'स्वास्थ्य का संवैधानिक अधिकार' देने की बात कही गई है। केन्द्र सरकार द्वारा 1983 और 2002 के बाद पेश की गई नई नीति में देश में स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर करने के कई प्रस्ताव हैं। नई स्वास्थ्य नीति के मसौदे में कहा गया है कि प्रति वर्ष देश में 6 करोड़ से अधिक लोग महंगे इलाज के चलते गरीबी का शिकार हो रहे हैं। इसका मुख्य कारण स्वास्थ्य संबंधी देखभाल के लिए लोगों को वित्तीय सुरक्षा नहीं मिल पाना है। वर्ष 2011–12 में ग्रामीण क्षेत्रों में परिवारों को अपनी आय का 6.9 प्रतिशत हिस्सा अपने परिवार जनों के इलाज पर खर्च करना पड़ा था। स्वास्थ्य नीति 2015 में सरकारी अस्पतालों में इलाज कराने पर हर नागरिक को स्वास्थ्य बीमा और निःशुल्क दवाइयां दिए जाने का प्रावधान यदि अमलीजामा पहनता है तो यकीनन यह उन ग्रामीणों के लिए राहत का विषय होगा जो गरीबी रेखा से नीचे जीवन जी रहे हैं। नई स्वास्थ्य नीति में गरीबी रेखा के लिए प्रति व्यक्ति मासिक खर्च 1640 रु. तय किया गया है। नई स्वास्थ्य नीति का कहना है कि स्वास्थ्य को हर किसी के लिए सुलभ, मुफ्त, गैर–नकदी और कर आधारित बनाया जाएगा। इसके लिए स्वास्थ्य पर सरकारी खर्च को हाल–फिलहाल सकल घरेलू उत्पाद के 2.5 प्रतिशत तक बढ़ाने की बात की गई है।

मूलतः सरकार समाज के हर व्यक्ति का अपनी ओर से स्वास्थ्य बीमा कराएगी। यह सरकारी कोष से होगा। यदि कोई व्यक्ति चाहे तो निजी अस्पतालों में अपना इलाज कराने के लिए अपना अलग से बीमा करा सकता है। सरकारी अस्पतालों में अवरचना यानी भवन, यंत्र इत्यादि का तथा कर्मचारियों के वेतन भत्ते का भुगतान सरकार सीधे अपने कोष से करेगी। पर इलाज के खर्चे का भुगतान अस्पताल को बीमा कोष से होगा। सरकारी बीमा कार्डधारक व्यक्ति को करना बस यह होगा कि वह सरकारी अस्पताल में अपना कार्ड लेकर चला जाए और इलाज करा कर लौट आए। उसे कहीं भी, कुछ भी भुगतान नहीं करना पड़ेगा। ग्रामीण भारत में यह नीति राहत का कार्य करेगी क्योंकि मुफ्त इलाज होने के बावजूद भी कई अन्य तरह के खर्चे सरकारी अस्पतालों में करने पड़ते हैं जिससे आर्थिक बोझ के चलते लोग इलाज को बीच में ही छोड़ देते हैं। नई स्वास्थ्य नीति को आशा की किरण के तौर पर देखा जा सकता है जो भारत के स्वास्थ्य मानचित्र पर सकारात्मक परिवर्तन लाएगी।

संदर्भ

1. www.bbc.co.uk/hindi/india/2011/01/110111_lancet_upart_rp_shtml
2. www.jsk.gov.in/hindi/ongoing_gov_prog.ask
3. www.archive.india.gov.in/hindi/citizes/health/health.phd?id=48
4. स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार की अधिकृत वेबसाइट
5. Sanitation. indiawaterportal.org/hindi/node/3253
6. archive.india.gov.in/hindi/citizes/graminbharat/graminbharat.php?id=8
7. pib.nic.in/newsite/hindifeatuer.aspx?relid=20328

(स्वतंत्र लेखन एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय से संबद्ध महाविद्यालय में अध्यापन)

ग्रामीण स्वास्थ्य और आयुष

—ममता रानी

स्वास्थ्य सुविधाओं से अधिक देश में 'स्वास्थ्य शिक्षा' की आवश्यकता है। अच्छी स्वास्थ्य शिक्षा से आधी से अधिक बीमारियां होने से रोकी जा सकती हैं। इससे न केवल सरकार, बल्कि जनता के भी पैसों की बचत होगी। यह स्वास्थ्य शिक्षा आयुष प्रणालियों में ही उपलब्ध कराई जा सकती है। अच्छी बात यह है कि देश की जनता में इनकी सामान्य समझ पहले से है और इसलिए इनकी स्वीकार्यता और भी अधिक होगी।

स्वाधीनता के बाद से ही देश के सामने जो लक्ष्य रहे हैं, उसमें स्वास्थ्य प्रमुख रहा है। 'सभी को स्वास्थ्य' देने के लिए अपने देश में जो प्रयास किए गए, उससे शहरों में अच्छी व्यवस्था खड़ी हो गई। बड़े–बड़े अस्पताल बन गए, एम्स जैसे विशाल और प्रतिष्ठित चिकित्सा महाविद्यालय और अस्पताल तैयार हुए, परंतु देश की ग्रामीण जनता की पहुंच से स्वास्थ्य सुविधाएं निरंतर दूर होती गईं। यह सही है कि देश में महामारियां आज नहीं होती जैसे कि ब्रिटिश शासन के दौरान हुआ करती थीं। हैजा, चेचक. प्लेग जैसी महामारियों को काबू कर लिया गया है। देश को पोलियोमुक्त भी कर लिया गया है। परंतु वास्तव में देखा जाए तो महामारियां देश की पराधीनता की उपज थीं। स्वाधीन भारत में तो पहले भी महामारियां नहीं थीं। पराधीनता समाप्त होते ही इनका समाप्त होना भी तय था। परंतु सबसे बड़ा सवाल यह है कि आज जो स्वास्थ्य सुविधाओं का ढांचा देश में विकसित किया जा रहा है, वह हमारे देश की बड़ी आबादी, ग्रामीण जनता के उपयोग का कितना है और उसकी पहुंच में है या नहीं।

समझने की बात तो यह है कि देश में स्वास्थ्य सुविधाओं का जो ढांचा तैयार किया गया, वह देश के ग्रामीण भागों तक ठीक से कभी पहुंच ही नहीं पाया। अच्छे प्रशिक्षित एमबीबीएस डाक्टर गांव जाने से परहेज करते रहे। साथ ही गांवों में आधारभूत सुविधाएं खड़ा करने लायक बजट भी कभी नहीं मिल पाया। परिणामस्वरूप ग्रामीण जनता नीम–हकीमों से इलाज कराने के लिए बाध्य होती रही। इस बात को सरकार ने भी महसूस कर लिया और इसलिए सरकार को राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन लाना पड़ा। परंतु सवाल है कि क्या राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन सबको स्वास्थ्य के लक्ष्य को पूरा कर सकता है? मिशन बनाना एक बात है और उस मिशन को पूरा करने के सही उपाय करना दूसरी बात।

ज्ञातव्य है कि देश की पहली राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति वर्ष 1983 में बनाई गई जिसमें पहली बार सभी नागरिकों को स्वास्थ्य सुविधाएं पहुंचाने का लक्ष्य रखा गया था। इसके बाद देश में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र और इसके उपकेंद्र खोले जाने लगे। परंतु इनकी संख्या देश की जनसंख्या के अनुपात में काफी कम थी। 31 मार्च,

2014 तक देश में 1,52,326 (एक लाख बावन हजार तीन सौ छब्बीस) उपकेंद्र, 25020 (पच्चीस हजार बीस) प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र और 5363 (पांच हजार तीन सौ तिरेसठ) सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र (ब्लॉक–स्तर), स्थापित किए जा चुके हैं। इसके अतिरिक्त देश में 11,493 सरकारी अस्पताल हैं और 27339 आयुष केंद्र। देश में (एलोपैथ के) 8,83,812 डॉक्टर हैं। नर्सों की संख्या 18,94,968 बताई गई है। दूसरी ओर देश में छह लाख से अधिक गांव हैं और अधिकतर गांवों में स्वास्थ्य सेवाएं नहीं पहुंच रही हैं। हालांकि सरकारी आंकड़ों के अनुसार केवल 20 प्रतिशत उपकेंद्र, 23 प्रतिशत प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र और 32 प्रतिशत सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों की ही कमी है, परंतु जमीनी स्तर पर देखा जाए तो यह कमी कहीं अधिक बड़ी है।

यदि हम इन उपकेंद्रों, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों और सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों की रचना पर ध्यान देंगे तो पाएंगे कि वास्तव में ये आंकड़े देश की खराब स्वास्थ्य सुविधाओं को ही दर्शाते हैं। एक उपकेंद्र पर एक महिला स्वास्थ्यकर्ता एएनएम और एक पुरुष स्वास्थ्यकर्ता रखा जाता है। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र में 4–6 बेड का अस्पताल और एक स्वास्थ्य अधिकारी होता है जिसके तहत 14 पैरामेडिकल स्टाफ होता है। सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों में 30 बेड का अस्पताल और विशेषज्ञ डाक्टर होते हैं। उपकेंद्रों के एएनएम कार्यकर्ता केवल एलोपैथ चिकित्सा की जानकारी रखते हैं। उन्हें केवल एलोपैथ पद्धति के नर्सिंग का ही प्रशिक्षण दिया जाता है। दूसरी ओर अधिकांश प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की स्थिति खराब है। कोई भी डॉक्टर गांवों में जाने के लिए तैयार नहीं है। जिन्हें भेजा जाता है, वे केंद्रों में बैठते नहीं हैं। ज्यादा दिन नहीं हुए हैं, जब एमबीबीएस के छात्रों के लिए गांवों में एक वर्ष के लिए सेवा देना अनिवार्य किए जाने पर डाक्टरों ने तीखा विरोध किया था। ऐसे में यह चिंतनीय हो जाता है कि यदि पर्याप्त संख्या में प्राथमिक चिकित्सा केंद्र खोल भी दिए जाएंगे तो उसके लिए डाक्टर कहां से लाए जाएंगे।

> कई राज्यों में भी आयुष विभाग ने ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अलग से योजनाएं बनाई हैं। उदाहरण के लिए मध्य प्रदेश के बैतुल जिले में आयुष विभाग ने 'आयुष ग्राम' विकसित करने की योजना बनाई है। इसके तहत जिले के स्वास्थ्य सेवा से अछूते ग्रामीण अंचलों में आयुष विभाग 10 आयुष ग्राम विकसित करेगा। एक आयुष ग्राम में औषधालय, अस्पताल, हर्बल पार्क और परामर्श केन्द्र जैसी व्यवस्थाएं की जाएंगी जिससे इस आयुष ग्राम के आसपास के गांवों के लोगों को भी इसका लाभ मिल सकेगा। फिलहाल जिले में आयुष विभाग के अंतर्गत 51 आयुर्वेदिक और होम्योपैथिक चिकित्सा केंद्र आते हैं। इनसे 2 लाख 45 हजार मरीज जुड़े हैं। हर साल आयुर्वेदिक और होम्योपैथिक चिकित्सा पद्वति से सैकड़ों नए मरीज जुड़ रहे हैं।

हालांकि वर्ष 2012 के भारत सरकार के आंकड़ों को देखें तो कुल 903 प्राथमिक चिकित्सा केंद्र डाक्टरविहीन हैं और 14873 केंद्रों में केवल एक ही डाक्टर उपलब्ध है। 7676 केंद्रों में लैब तकनीशियन नहीं हैं तो 5549 केंद्रों में फार्मास्यूटिकल नहीं हैं। केवल 5438 केंद्रों में महिला डाक्टर उपलब्ध हैं। दूसरी ओर, सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों में विशेषज्ञ डाक्टरों की संख्या और भी दयनीय है। आवश्यकता है 19332 विशेषज्ञों की जबकि सरकार केवल 9914 की ही व्यवस्था कर पाई है और उनमें से भी 5858 ही कार्यरत हैं।

ये आंकड़े बताते हैं कि देश की बड़ी आबादी के लिए उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाएं कितनी कम हैं। इससे यह भी साफ है कि यदि हमें सबको स्वास्थ्य का सपना साकार करना है तो इसके दस–बीस गुना बजट की आवश्यकता पड़ेगी जो वर्तमान स्थिति में संभव ही नहीं है। इसका कारण यह है कि एलोपैथ की चिकित्सा उपकरणों पर आधारित है जो खासे मंहगे हैं। गांव–गांव तक उनकी उपलब्धता एक अच्छे–खासे बजट की मांग करता है। ऐसी स्थिति में क्या किया जाए?

यदि हम रोगों की बात करें तो वर्तमान में जो रोग देश में व्यापक हो रहे हैं, उनमें से अधिकांश हमारी जीवनशैली और खानपान में आए बदलाव के कारण बढ़ रहे हैं। चाहे वह हृदय रोग हो या रक्तचाप, मधुमेह हो या फिर मोटापा। इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्रों में भी मलेरिया, डायरिया, ज्वर, विषम ज्वर, खांसी, कालाज़ार जैसी बीमारियां ही अधिक देखी जा रही हैं। आज तो शहरों के खानपान की नकल करने के कारण गांवों में भी हृदय रोग, रक्तचाप और मधुमेह जैसी जीवनशैली से संबद्ध बीमारियां फैलने लगी हैं। इन बीमारियों की रोकथाम के लिए एलोपैथ से कहीं अधिक सस्ती, सक्षम, प्रभावी और निर्दोष इलाज प्रस्तुत करती हैं वैकल्पिक और भारतीय चिकित्सा प्रणालियां। इनमें से अधिकांश बीमारियां देशज चिकित्सा पद्धतियों यानी कि आयुर्वेद, योग और प्राकृतिक चिकित्सा तथा वैकल्पिक पद्धतियों यानी कि होमियोपैथ, यूनानी आदि से ठीक की जा सकती हैं।

देखा जाए तो भारत में स्वास्थ्य की देखभाल के लिए प्राचीनकाल से कई प्रणालियां अपनाई जाती रही हैं। सरकार प्रत्येक मान्यता प्राप्त चिकित्सा पद्धति का विकास करने एवं प्रेक्टिस करने के अवसर प्रदान करती है। इसके लिए सरकार ने

'आयुष विभाग' बना रखा है जिसे मोदी सरकार ने अलग मंत्रालय का दर्जा दे दिया है। आयुष आयुर्वेद, योग एवं नेचुरोपैथी, यूनानी, सिद्धा एवं सोवा–रिगपा और होम्योपैथी का संक्षिप्त रूप है। चिकित्सा की आयुष प्रणाली में चिकित्सा की भारतीय प्रणालियां एवं होम्योपैथी का एक समूह शामिल है। स्वास्थ्य रक्षा और चिकित्सा के लिए आयुर्वेद सबसे पुरानी प्रणाली है और इसका उपयोग 5000 वर्षों से अधिक समय से किया जा रहा है, जबकि होम्योपैथी का उपयोग पिछले 100 वर्षों से किया जा रहा है।

एक आकलन के अनुसार केरल, महाराष्ट्र , हिमाचल प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, उत्तराखंड, गोवा एवं ओडिशा में आयुर्वेद अधिक प्रचलन में है। यूनानी प्रणाली का इस्तेमाल आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, जम्मू एवं कश्मीर, बिहार, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उत्तर–प्रदेश, दिल्ली और राजस्थान के कुछ भागों में देखा जा सकता है। होम्योपैथी का उपयोग उत्तर प्रदेश, केरल, पश्चिम बंगाल, ओडिशा, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, पंजाब, तमिलनाडु, बिहार, गुजरात एवं पूर्वोत्तर राज्यों में काफी सीमा तक किया जाता है। तमिलनाडु, पुदुचेरी एवं केरल के क्षेत्रों में सिद्धा प्रणाली का उपयोग किया जाता रहा है। चिकित्सा की सोवा–रिगपा प्रणाली को हाल ही में मान्यता प्रदान की गई है परंतु इसका इतिहास 2500 वर्षों से अधिक का है। इसका प्रचलन हिमालय क्षेत्र में खासकर, लेह और लद्दाख (जम्मू और कश्मीर), हिमाचल प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम, दार्जिलिंग आदि में है। सोवा–रिगपा प्रणाली अस्थमा, ब्रोंकिटिस, अर्थराइटिस जैसी क्रॉनिक बीमारियों के लिए प्रभावशाली मानी गई है। उत्तर प्रदेश और कर्नाटक में सोवा–रिगपा के कुछ शैक्षणिक संस्थान हैं।

आयुष सेवाएं निजी, सार्वजनिक और स्वयंसेवी क्षेत्र के संगठनों द्वारा मुहैया की जाती हैं। वर्तमान में देश में आयुष क्षेत्र के तहत बुनियादी ढांचे में 62649 बिस्तरों की क्षमता के साथ 3277 अस्पतालों, 24289 औषधालयों, 495 अंडर ग्रेजुएट कॉलेजों, 106 स्नातकोत्तर विभागों वाले कॉलेज और देश में भारतीय चिकित्सा पद्धति और होम्योपैथी के 785185 पंजीकृत चिकित्सक हैं। इस प्रकार हम पाते हैं कि देश में आयुष का भी एक बड़ा नेटवर्क है जिसका उपयोग देश की ग्रामीण जनता को स्वास्थ्य उपलब्ध कराने में किया जा सकता है। सरकार ने भी इसकी ओर थोड़ा–सा ध्यान देने की कोशिश की है। होम्योपैथी के साथ आयुष को चिकित्सा पद्धतियों की मुख्यधारा के साथ जोड़ने की रणनीति राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन का एक मुख्य पहलू रहा है। इसके फलस्वरूप अब आयुष की सुविधाएं 803 प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों, 113 सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्रों और 24 जिला अस्पातालों में उपलब्ध हैं।

अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस

21 जून, 2015 को विश्वभर में अंतर्राष्ट्रीय योगदिवस मनाया गया। नई दिल्ली में राजपथ पर सामूहिक योग प्रदर्शन का नेतृत्व प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने किया। प्रधानमंत्री ने कहा कि यह एक नए युग की शुरुआत है जो शांति और सद्भाव के लिए मानवता को प्रेरणा देगा। प्रधानमंत्री ने कहा कि अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाने के लिए विश्व के एकजुट होने के अवसर पर योग से बहुत अधिक अपेक्षाएं होना स्वाभाविक है, जिन्हें विश्व के कल्याण के लिए पूरा करने की जिम्मेदारी निभाने के लिए भारत तैयार है।

प्रधानमंत्री ने विश्व के उन सभी देशों का आभार प्रकट किया, जिन्होंने अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाया। उन्होंने उन 177 देशों का भी धन्यवाद किया जिन्होंने 21 जून को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस के रूप में मनाने के लिए संयुक्त राष्ट्र में उनके प्रस्ताव का समर्थन किया था। श्री मोदी ने कहा कि यह समर्थन सिर्फ भारत के लिए नहीं है, बल्कि योग की महान परम्परा के प्रति है। उन्होंने कहा कि योग केवल कसरत ही नहीं है बल्कि मन और शरीर के बीच संतुलन स्थापित करता है तथा व्यक्ति की आंतरिक शक्ति को बढ़ाने में भी मदद करता है।

योग का स्वास्थ्य संबंधी पहलू सर्वाधिक महत्वपूर्ण बन गया है और आधुनिक चिकित्सा पद्धति भी इसका महत्व समझने लगी है। योग का इस्तेमाल बीमारियों की रोकथाम के लिए किया जा रहा है। आज स्वास्थ्य क्षेत्र के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती गैर–संचारी रोगों का बोझ कम करने की हैं। परम्परागत चिकित्सा में संचारी रोगों की समस्या का स्थायी या लागत की दृष्टि से किफायती समाधान उपलब्ध नहीं है। अनेक लोगों का मानना है कि योग इन रोगों की रोकथाम और नियंत्रण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकता है।

(पसूका से साभार)

बहरहाल यदि देखा जाए तो एलोपैथ के डॉक्टर हो या आयुष के, इनकी अधिकांश संख्या शहरों में केंद्रित है। शहरों में पढ़े–लिखे ये डाक्टर गांवों में जाना और रहना सहजता से स्वीकार नहीं कर पाते। इसका कारण भी है। अधिकांश गांवों में आधारभूत सुविधाओं का घनघोर अभाव है। बिजली का अभाव, अच्छे विद्यालयों का अभाव, सड़कों आदि का अभाव। इन सबके कारण शहरों में रहने के आदी हो चुके लोग और डॉक्टरी की पढ़ाई करने के बाद विदेश जाने का स्वप्न पाले लोग गांवों में जाना तो कदापि स्वीकार नहीं पाएंगे। इसका उपाय यही हो

सकता है कि सरकार पहले तो गांवों में आधारभूत सुविधाओं का विकास करे फिर स्वास्थ्य सुविधाओं का। आधारभूत सुविधाओं का विकास भी एक बड़े बजट की मांग करता है और यह काफी समयसाध्य कार्य है। क्या इतने समय तक ग्रामीणों को स्वास्थ्य से वंचित रहना होगा?

आयुष विभाग के पास इसका एक समाधान उपलब्ध हो सकता है। आयुष की सबसे प्रमुख प्रणाली आयुर्वेद है जिसके वैद्य सुदूर गांवों में भी पाए जाते हैं। जनजातीय समाजों में भी परंपरागत वैद्य पाए जाते हैं जो देसी पद्धतियों से अनेक बीमारियों का सफलतापूर्वक इलाज करते हैं। एक अध्ययन के अनुसार देश में कुल मेडिकल प्रैक्टिशनरों की संख्या में सबसे बड़ा प्रतिशत आयुर्वेद और होम्योपैथ के चिकित्सकों (36.7 प्रतिशत) का है। इसके अतिरिक्त अपनी पहचान नहीं बतलाने वालों का प्रतिशत 22.7 प्रतिशत है जो निश्चित रूप से आधुनिक डिग्रीविहीन परंपरागत वैद्य ही हो सकते हैं। (देखें तालिका 2) ये वैद्य वैसे तो आधुनिक शिक्षा की डिग्रियों से वंचित होते हैं लेकिन इनके पास रोगों की पहचान और चिकित्सा का अच्छा परंपरागत ज्ञान होता है। ये आयुर्वेदिक वैद्य प्राथमिक चिकित्सा केंद्रों को भी सक्रिय कर सकते हैं। थोड़े से प्रशिक्षण से गांव के वैद्य को गांव में होने वाली सामान्य बीमारियों जैसे कि मलेरिया, डायरिया, खांसी–जुकाम, ज्वर, गैस्ट्रिक आदि का इलाज करने योग्य बनाया ही जा सकता है। इतना तो वे पहले से भी जानते ही हैं, केवल एक पंजीकरण की आवश्कता होती है जो पूरी की जा सकती है। देखा जाए तो ये परंपरागत वैद्य सरकारी एएनएम कार्यकर्ताओं से कहीं अधिक जानकार होते हैं। एक सामान्य–सी प्रायोगिक परीक्षा लेकर उन्हें पंजीकृत किया जा सकता है और उन्हें इन प्राथमिक केंद्रों में बैठाया जा सकता है। इससे स्वास्थ्य सुविधाएं अधिक बेहतर हो सकती हैं।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि गांवों में जिस तरह की बीमारियां फैलती हैं, उनमें से अधिकांश केवल कुछेक परहेजों से रोकी जा सकती हैं। यदि हो भी जाएं तो घरेलू दवाओं से ठीक हो सकती हैं। उदाहरण के लिए मिजिल्स या छोटी माता है। मिजिल्स का कोई इलाज एलोपैथ में नहीं है। परंतु देसी उपायों में नीम इसका अच्छा इलाज है। इसी प्रकार पथरी की बीमारी है। पथरी की बीमारी थोड़े परहेजों के साथ आयुर्वेद के सामान्य खानपान (कुलथी की दाल और पत्थरचट्टा के पत्तों के सेवन) से ठीक की जा सकती है। होम्योपैथ में भी इसे ठीक करने की दवाएं हैं। इन दोनों ही पद्धतियों में ऑपरेशन की आवश्यकता नहीं पड़ती और दोनों ही पद्धतियां सस्ती हैं। इस प्रकार थोड़ी–सी जागरुकता से भी ग्रामीण अंचलों में स्वास्थ्य की उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है। एक महत्वपूर्ण बात यह भी है कि बहुत सारी आयुर्वेदिक दवाएं घर में भी बनाई जा सकती हैं। लोग बनाते भी हैं। उनकी विधियां सर्वसुलभ हैं। उदाहरण के लिए काली मिर्च और तुलसी का काढ़ा मलेरिया के लिए रामबाण औषधि है और यह घर में सरलता से बनाया जा सकता है।

वास्तव में ग्रामीण अंचलों की स्वास्थ्य समस्याएं एलोपैथ की बजाय आयुर्वेद और होम्योपैथ जैसी प्रणालियों द्वारा अधिक सरलता से ठीक की जा सकती हैं। इसके लिए बड़े–बड़े चिकित्सा उपकरणों की आवश्यकता नहीं होती और न ही ऑपरेशन जैसी जटिल व कठोर क्रियाओं की आवश्यकता होती है। इसलिए देश भर में महंगे अस्पतालों की उतनी अधिक आवश्यकता नहीं है जितनी सामान्य बीमारियों को प्रारंभ में ही रोक देने वाले सामान्य अस्पतालों की। कहा जा सकता है कि स्वास्थ्य सुविधाओं से अधिक देश में 'स्वास्थ्य शिक्षा' की आवश्यकता है। अच्छी स्वास्थ्य शिक्षा से आधी से अधिक बीमारियां होने से रोकी जा सकती हैं।

संदर्भ सूची

1. http://www.planningcommission-nic-in/reports/genrep/bkpap2020/26_bg2020-pdf
2. http://www.archive-india-gov-in/sectors/health_family/inde.php\id=8
3. http://medind-nic-in/hab/t05/i1/habt05i1p40-pdf
4. http://pib-nic-in/newsite/hindifeature-asp.\relid=22639
5. http://www.bhaskar-com/news/MP&BETU&bhaskar&news&betul&madhya&pradesh&india&4962837&NOR-html
6. http://nrhm-gov-in/hi/nrhm&componentshealth&systems&strengthening/infrastructure-html
7. https://data-gov-in/catalog/registered&medical&practitioners&under&ayush#web_catalog_tabs_block_10

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार और सेंटर फॉर सिविलाइजेशनल स्टडीज में शोध सहायिका हैं।)

ई–मेल : mamata.rani75@gmail.com

स्वच्छ भारत, स्वस्थ भारत

–संजय श्रीवास्तव

महात्मा गांधी के स्वच्छ भारत के सपने को पूरा करने के उद्देश्य से प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 02 अक्तूबर, 2014 को ''स्वच्छ भारत अभियान'' की शुरुआत की। उन्होंने कहा कि जन स्वास्थ्य और गरीब लोगों की आय की सुरक्षा में स्वच्छ भारत अभियान का व्यापक प्रभाव पड़ेगा और अंततः राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में इसका योगदान होगा। स्वच्छ भारत अभियान के हिस्से के रूप में विभिन्न मंत्रालय और विभाग इसमें योगदान के लिए अनेक कदम उठा रहे हैं।

महात्मा गांधी जब 1915 में दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटे थे तो उन्होंने आजाद भारत के साथ एक सपना और देखा था। ये सपना स्वच्छ भारत का था। जब उन्होंने पहली बार भारत को जानने के लिए यात्रा की तो उन्हें देश में जगह–जगह अस्वच्छता का आलम देख बहुत दुख हुआ था। तब वह अपने भाषणों में अगर देश को जगाने का आह्वान करते थे तो साथ ही स्वच्छता पर भी खासा जोर देते थे। देश आजाद हो गया लेकिन गांधी जी का वो सपना अब तक सही मायनों में पूरा नहीं हो सका। पिछले साल श्री नरेंद्र मोदी की अगुवाई वाली सरकार ने देश को फिर से स्वच्छ और साफ–सुथरा करने का बीड़ा उठाया। पहल खुद प्रधानमंत्री ने की। उन्होंने महात्मा गांधी के जन्मदिन दो अक्टूबर, 2014 को 'स्वच्छ भारत' मिशन की शुरुआत की। उनका इरादा अगले पांच सालों में देश की तस्वीर 'स्वच्छ भारत' में बदल देने की है। इरादा ये है वर्ष 2019 में जब हम महात्मा गांधी की 150वीं वर्षगांठ मना रहे हो तो देश की स्वच्छ और उजली तस्वीर के साथ सही मायनों में उन्हें श्रद्धांजलि दे सकें। इतने कम समय में ही 'स्वच्छ भारत' मिशन आकार लेता हुआ लग रहा है। इससे जुड़ी योजनाएं लागू हो रही हैं। योजनाओं को अंतिम रूप दिया जा रहा है। स्वच्छता को लेकर जागरुकता का ऐसा माहौल बनने लगा है, जिसकी वाकई इस देश को जरूरत है।

पिछले दिनों स्वच्छ भारत अभियान पर मुख्यमंत्रियों की एक समिति आंध्रप्रदेश के मुख्यमंत्री चंद्रबाबू नायडू की अध्यक्षता में गठित की गई थी जो जून के आखिर तक अपनी रिपोर्ट सरकार को सौंप देगी। इसके बाद सही मायनों में इस अभियान को स्पष्टता और मजबूती के साथ बढ़ता हुआ देखा जा सकेगा। ये

लुधियाना केयर्स की महिलाएं

लुधियाना देश के सबसे ज्यादा प्रदूषित शहरों में से एक है लेकिन अब यहां भी सफाई को लेकर धारणा बदल रही है। सफाई का बीड़ा उठाया है लुधियाना केयर्स नाम के संगठन ने, जिसे महिलाएं चलाती हैं। इन महिलाओं ने अपने काम से शहर में सफाई को लेकर नई जागरुकता पैदा करने में सफलता हासिल की है। वो अतिक्रमण या छोड़ दी गई जगहों पर जाकर सफाई का प्रयास कर रही हैं। सफाई के बारे में चेतना फैला रही हैं। साथ ही नागरिकों को सामाजिक कार्यों में योगदान के लिए प्रेरित कर रही हैं।

इन्होंने अपना काम पांच सौ मीटर में फैले एक सरकारी स्कूल की चारदीवारी से शुरू किया, जो पोस्टरों और गंदगी से पटा हुआ था। उनके काम के बाद वह ऐसी जगह बन गई कि शहर के लोगों का ध्यान उस तरफ गया। फिर अनाज मंडी में बसी झुग्गियों की ओर खुद को केंद्रित किया। सिविल अस्पताल में सुधार की पहल की। सबसे गंदी जगहों को साफ करके वहां पेड़ लगाए। अब इन महिलाओं को पूरे शहर का साथ मिलने लगा है और ये शहर खुद को सफाई की ओर लगा रहे हैं।

समिति अभियान में निजी क्षेत्र के शामिल होने और संस्थागत तंत्र खड़ा करने पर सुझाव देने के साथ ही विभिन्न पहलुओं पर काम कर रही है। कई बैठकें हो चुकी हैं। जून के आखिर तक रिपोर्ट देने से पहले कई और बैठकों की भी संभावना है। हालांकि ये समिति पहले ही नीति आयोग के मुख्य कार्यकारी अधिकारी की अगुआई में एक कार्यसमूह गठित कर चुकी है, जो स्वच्छ भारत अभियान पर वैकल्पिक उपायों और बेहतर तकनीक प्रदर्शित करने वाली बेहतर कार्यप्रणाली से संबंधित जानकारी जुटाएगा। कार्यसमूह और समिति रिपोर्ट तैयार करने के पहले कुछ क्षेत्रों का दौरा भी करेंगे।

स्वच्छ भारत अभियान का मतलब केवल साफ सुथरे परिवेश से ही नहीं बल्कि नागरिकों की सहभागिता से अधिक–से अधिक पेड़ लगाने, कचरा मुक्त वातावरण बनाने, शौचालय की सुविधा उपलब्ध कराकर स्वच्छ भारत का निर्माण करने से भी है। देश में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए स्वच्छ भारत का निर्माण बहुत जरूरी है। आप खुद देखते होंगे कि अस्वच्छ भारत की तस्वीरें अक्सर भारतीयों के लिए शर्मिंदगी की वजह बन जाती हैं, इसलिए स्वच्छ भारत के निर्माण एवं देश की छवि सुधारने का यही सही समय और अवसर है। जब स्वच्छता संबंधी बातें आदतों में शामिल हो जाएंगी तो बदलाव भी खुद–ब–खुद ही दिखने लगेगा।

बजट में खास प्रावधान

वित्तमंत्री श्री अरुण जेटली ने वर्ष 2015–16 में आम बजट में इसके लिए खास प्रावधान किया है। इसमें ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों तथा विद्यालय परिसर में 'स्वच्छ भारत' अभियान के माध्यम से स्वच्छता संबंधी सुविधाओं में सुधार के लिए स्वच्छ भारत कोष की स्थापना की गई है। स्वच्छता संबंधी सुविधाओं में सुधार करने और गंगा नदी के संरक्षण के राष्ट्रीय प्रयासों में जनसाधारण की भागीदारी को बढ़ाने के लिए अधिनियम की धारा 80 (6) में संशोधन का प्रस्ताव है। इस उपबंध का भी प्रस्ताव है कि स्वच्छ भारत कोष में किसी दाता द्वारा दिए गए दान और स्वच्छ गंगा निधि में घरेलू दाताओं द्वारा किए गए दान की कुल राशि पर कोई कर नहीं लगेगा। हालांकि कंपनी अधिनियम 2013 की धारा 135 की उपधारा (5) के अधीन निगमित सामाजिक दायित्व के लिए खर्च की गई कोई राशि दाता की कुल आय से कटौती के योग्य नहीं होगी। स्वच्छ भारत कोष और स्वच्छ गंगा निधि के महत्व पर विचार करते हुए अधिनियम की धारा 10 (23 ग) में संशोधन का प्रस्ताव किया गया है जिससे स्वच्छ भारत कोष और स्वच्छ गंगा निधि की आय को आयकर से छूट दी जा सके। ये संशोधन 1 अप्रैल, 2015 से प्रभावी हो गए हैं। इस तरह से देखें तो सरकार भारत को स्वच्छ रखने, शहरों और हमारे परिवेश को बेहतर रखने के पक्के इरादे के साथ बढ़ती हुई लग रही है। साथ ही सरकार कुछ सेवाओं पर एक से दो फीसदी सेस पर भी विचार कर रही है, ताकि स्वच्छता अभियान के लिए एक बड़ा कोष एकत्र हो पाए।

मूल्यांकन रिपोर्ट में गुजरात सबसे आगे

केंद्रीय शहरी विकास मंत्रालय ने स्वच्छ भारत मिशन के क्रियान्वयन का मूल्यांकन तीन अप्रैल, 2015 को जारी किया। इसके अनुसार वर्ष 2014–15 के दौरान गुजरात स्वच्छ भारत मिशन को लागू करने में देश के सभी राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों में सबसे आगे रहा। स्वच्छ भारत मिशन के तहत वर्ष 2014–15 में कुल 270069 घरों में बने शौचालयों में से 60 प्रतिशत यानी 165376 शौचालय अकेले गुजरात में बने। दूसरे स्थान पर मध्य प्रदेश रहा, जहां 4697 शौचालयों का निर्माण हुआ जबकि तीसरे स्थान पर कर्नाटक रहा।

केंद्रीय शहरी विकास मंत्रालय ने स्वच्छ भारत मिशन के तहत प्राप्त प्रस्तावों के आधार पर वित्तवर्ष 2014–15 के दौरान 900 करोड़ रुपये की मंजूरी प्रदान की थी जिसमें राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों को 700 करोड़ रुपये दिए गए थे।

ठोस कचरा प्रबंधन को भी प्रोत्साहित करने में गुजरात अन्य राज्यों की तुलना में आगे रहा। इसने राज्य के 195 में से 120 शहरों की नगरपालिकाओं के ठोस कचरे का संग्रह करके उसे

निपटान स्थल पर पहुंचाने में 100 प्रतिशत सफलता हासिल की। इसके बाद ओडिशा के 107 शहरों और कर्नाटक के 47 शहरों में यह काम हुआ। कुल 4041 वैधानिक शहरों में से 328 में ही नगरपालिकाओं के कचरे का 100 प्रतिशत संग्रह हुआ और उसे निपटान स्थल तक ले जाया गया।

सामुदायिक शौचालय सीटें बनाने में ओडिशा दूसरे राज्यों से आगे रहा। यहां वर्ष 2014–15 में 740 शौचालय सीटें बनाई गईं। अंडमान और निकोबार में 200 सामुदायिक शौचालय सीटें बनाई गईं, जबकि कर्नाटक में यह संख्या 100 रही। वर्ष 2014–15 के दौरान कुल 1222 सामुदायिक शौचालय सीटें बनाई गईं।

पांच वर्ष के स्वच्छता मिशन के तहत 62009 करोड़ रुपये खर्च करने का प्रावधान किया गया है। इसके तहत घरों में 1.04 करोड़ शौचालयों, 2.51 लाख सामुदायिक शौचालय सीटों और 2.55 लाख सार्वजनिक शौचालय सीटों का निर्माण किया जाना है। इसके तहत 37 करोड़ शहरी लोगों को ठोस कचरा प्रबंधन में सहायता दी जाएगी।

अभियान का उद्देश्य पांच वर्षों में भारत को खुले में शौच से मुक्त देश बनाना है। अभियान के तहत देश में लगभग 11 करोड़ 11 लाख शौचालयों के निर्माण के लिए एक लाख चौंतीस हजार करोड़ रुपये खर्च किए जाएंगे। बड़े पैमाने पर प्रौद्योगिकी का उपयोग कर ग्रामीण भारत में कचरे का इस्तेमाल उसे पूंजी का रूप देते हुए जैव उर्वरक और ऊर्जा के विभिन्न रूपों में परिवर्तित करने के लिए किया जाएगा। अभियान को युद्ध स्तर पर प्रारंभ कर ग्रामीण आबादी और स्कूल शिक्षकों और छात्रों के बड़े वर्गों के अलावा प्रत्येक स्तर पर इस प्रयास में देश भर की ग्रामीण पंचायत, पंचायत समिति और जिला परिषद को भी इससे जोड़ना है।

रेलवे स्टेशनों और ट्रेनों में दिखने लगा बदलाव

वैसे सच कहें तो बदलाव कुछ हद तक दिखने लगा है। रेलवे स्टेशनों से लेकर सरकारी संस्थानों और सार्वजनिक स्थानों पर ये नजर आता है। रेलवे प्लेटफार्म न केवल ज्यादा साफसुथरे हुए हैं बल्कि लंबी दूरी की ट्रेनों में साफ–सफाई पर खास ध्यान दिया जाने लगा है। इसके लिए एक मोबाइल सेवा भी शुरू की गई है। रेलवे में इसके लिए नया विभाग भी स्थापित किया जाएगा, जो स्टेशनों और गाड़ियों की सफाई के लिए एकीकृत सफाई विभाग के रूप में काम करेगा, जिसमें प्रोफेशनल एजेंसियों की सेवाएं ली जाएंगी और कर्मचारियों को साफ–सफाई का नवीनतम पद्धति से प्रशिक्षण दिया जाएगा।

साफ–सफाई का जिक्र रेलमंत्री सुरेश प्रभु ने फरवरी में अपने रेल बजट भाषण में भी किया। उन्होंने कहा, हम सरकार के प्रमुख कार्यक्रम स्वच्छ भारत अभियान के तहत स्वच्छ रेल बनाने के कार्यक्रम को जोरदार ढंग से चलाना चाहते हैं। इसलिए अब हम स्वच्छ रेल, स्वच्छ भारत के लिए कार्य करेंगे।

रेलवे की योजना बड़े कोचिंग टर्मिनलों के समीप अपशिष्ट पदार्थों से ऊर्जा पैदा करने वाले संयंत्रों को स्थापित करने की है। शुरू में एक पायलट संयंत्र स्थापित किया जाएगा। फिर चरणबद्ध तरीके से और अधिक संयंत्रों की स्थापना की जाएगी। अगर सफाई के मद्देनजर देखा जाए तो स्टेशनों और गाड़ियों में साफ–सफाई की हालत में भारी सुधार की गुंजाइश है। स्टेशनों पर ज्यादा शौचालयों की जरूरत है। शायद इसी के मद्देनजर रेलवे अपने 650 स्टेशनों पर नए शौचालय बनवाने जा रहा है। अब तक स्टेशनों पर 17,387 जैव शौचालय लगाए गए हैं। इस वर्ष करीब इतने ही और जैव शौचालय लगाए जाने की उम्मीद है।

मेरा डिब्बा साफ करें

अगर आप रेल में यात्रा कर रहे हो तो केवल एक मिस्ड कॉल या मैसेज के माध्यम से अपना डिब्बा साफ करवा सकते हैं। दरअसल एक पायलट प्रोजेक्ट के तहत केन्द्रीय रेलवे ने 'मेरा डिब्बा साफ करें' प्रोग्राम शुरू किया है, जो पिछले दो–तीन महीनों से सफलतापूर्वक चल रहा है। इसमें जो यात्री लम्बी दूरी की ट्रेनों में सफर कर रहे हैं, वो रेल विभाग को एक मिस्ड कॉल करके अपना डिब्बा साफ करवा सकते हैं। रेल पर सवार सफाई कर्मचारियों की टीम ठीक उसी डिब्बे में जाकर सफाई कर देगी। यह प्रोग्राम अभी तक करीब दो दर्जन ट्रेनों में चल रहा है। इसे जल्द ही और बढ़ाया जाएगा।

यात्री इसमें 58888 पर मैसेज कर सकते हैं। यह सिस्टम एक केन्द्रीय सर्वर से जुड़ा हुआ है, जोकि तुरंत जान लेता है कि यात्री किस ट्रेन में और किस सीट पर बैठकर यात्रा कर रहा है। सर्वर यह सारी जानकारी सफाई कर्मचारियों को मुहैया करा देता है। साथ ही सर्वर यात्री को मैसेज के माध्यम से सफाई कर्मचारी का नाम और मोबाइल नम्बर उपलब्ध कराता है जोकि उनकी शिकायत के निवारण हेतु डिब्बे में आएगा। एक गुप्त कोड भी यात्री को भेजा जाता है।

जैसे ही सफाई का कार्य खत्म होता है कर्मचारी वह गुप्त कोड लेकर रेल दफ्तर के केन्द्रीय सर्वर को मैसेज कर देता है। इससे प्रक्रिया समाप्त हो जाती है। इसके अलावा रेलवे ने एक वेबसाइट भी शुरू की है जिसमें वह अपना पीएनआर नंबर डालकर सफाई का अनुरोध कर सकते हैं।

केन्द्रीय रेलवे के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग द्वारा शुरू की गई इस पहल को सभी ज़ोन में जल्द ही लागू किया जाएगा।

खुले में शौचमुक्त होने से बीमारियों से बचाव

ये मध्य प्रदेश के एक छोटे से गांव की कहानी है जो खुले में शौच से पूरी तरह मुक्त हो चुका है। मध्य प्रदेश के सिहोर जिले के बुधनी ब्लॉक में विंध्याचल की तलहटी में स्थित ये गांव है रतनपुरा। यहां महिलाओं के एक ग्रुप ने अपने गांव को खुले में शौच से मुक्त और साफ बनाने में कड़ी मेहनत की। नतीजतन अब यहां लोग डायरिया, बुखार और दूसरी तरह की बीमारियों से ग्रसित नहीं हैं।

इस गांव में दिसम्बर, 2010 तक 113 घरों में महज एक शौचालय था। गांव अस्वच्छ था। चारों तरफ खुले मल और गन्दगी की तीक्ष्ण गंध फैली रहती थी जिससे गांव में डायरिया, बुखार और दूसरी कई बीमारियां बनी रहती थीं। लोगों की ज्यादा कमाई इलाज पर ही खर्च होती थी। जब गांव में प्रशिक्षित सेनिटेशन की टीम आई तो उसने महिलाओं को साथ लिया। महिलाओं की भी समझ में आ गया कि खुले में शौच की आदत अब जारी नहीं रखी जानी चाहिए। फिर महिलाओं ने ट्रेनिंग लेकर खुद ही पांच शौचालयों का निर्माण शुरू किया। ये गांव में किसी आंदोलन की तरह फैल गया। महिलाओं ने इसमें जबर्दस्त भागीदारी की। महज दस दिनों के भीतर रतनपुरा गांव के सभी घरों ने अपने गड्ढे वाले शौचालय बना डाले। फिर यहां शौचालय संबंधी दूसरी तकनीक का भी इस्तेमाल हुआ। अब गांव पूरी तरह स्वच्छ है। यहां न मक्खियां दिखती हैं और न मच्छर। बीमारियों पर भी काफी हद तक काबू पाया जा चुका है।

स्वच्छ भारत के लिए खास वेबसाइट

स्वच्छ भारत अभियान को गति देने और देश को इससे जोड़ने के लिए वेबसाइट भी शुरू की गई है। इससे कोई भी जुड़ सकता है और इस पर आकर देशभर में चल रहे स्वच्छता अभियान का जायजा ले सकता है। कोई भी इससे जुड़ इसमें पंजीकरण करा सकता है। इसके बाद यहां खुद के किए जा रहे स्वच्छता संबंधी कार्यों की तस्वीरें साझा कर सकता है। ये वेबसाइट देशवासियों को सफाई के लिए प्रेरित करती है। इसमें सरकारी संस्थानों से भी योगदान की अपील की गई है। केवल यही नहीं ये वेबसाइट उन सरकारी संस्थानों का ब्यौरा और कार्यकलाप के विवरण देती है, जो स्वच्छ भारत में गतिविधियां चला रहे हैं। वेबसाइट निजी संगठनों, सार्वजनिक क्षेत्र की इकाइयों, समुदायों से भी अपनी वेबसाइट पर लॉग इन करके पंजीकरण की अपील करती है।

स्वच्छता के लिए नया एप लांच

राष्ट्रीय सूचना केन्द्र के साथ मिलकर पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय ने एक मोबाइल आधारित एप्लीकेशन लांच किया है। इससे स्वच्छ भारत अभियान को मजबूती मिलेगी। फिलहाल यह सेवा केवल एंड्रायड धारकों को ही उपलब्ध है। इस सेवा का ऑफलाइन संस्करण भी मौजूद है।

इस एप की मदद से उपयोगकर्ता घरेलू शौचालय की तस्वीरें अपलोड कर सकते हैं। जीपीएस की मदद से उन्हें टैग भी कर सकते हैं। लाभार्थी का विवरण उसके अक्षांश और देशांतर के साथ एसबीएम सर्वर में सहेज कर रखा जा सकता है।

यह एप्लिकेशन न सिर्फ शौचालय उपस्थिति का ट्रैक रखती है बल्कि उसके उपयोग की जानकारी भी रखती है। इसका एक खण्ड पंचायत–स्तर पर शौचालय दस्तावेजों का ध्यान रखता है। एक अलग खण्ड पंचायत स्तर पर शौचालय के उपयोग के दस्तावेज के लिए समर्पित है। इसके अनिवार्य क्षेत्रों में शामिल हैं– घर का पता, शौचालय काम कर रहा है अथवा नहीं यदि हां, तो कबसे। दूसरी जानकारियों में शामिल है शौचालय में पानी की व्यवस्था और रखरखाव।

उम्मीद जगाने वाली पहल

साफ हुए वाराणसी के घाट

वाराणसी में तीन–चार दशक बाद लोगों ने महाश्मशान तीर्थ यानी मणिकर्णिका घाट को अंतिम सीढ़ियों तक साफ–सुथरा देखा। मनुष्य के अंतिम संस्कार से जुड़े तीर्थ पर अब लोग गंदगी से बेज़ार नजर नहीं आएंगे। वाराणसी वो जगह है जहां महात्मा गांधी जब वर्ष 1915 में गए तो उन्हें इस तीर्थनगरी में जगह–जगह फैली गंदगी से बहुत मायूसी हुई थी। तब उन्होंने

अपने भाषणों में इसका जिक्र ही नहीं किया था बल्कि स्वच्छता की अपील की थी। अब जब स्वच्छता अभियान शुरू हुआ तो वाराणसी ने खुद को पीछे नहीं रखा। ये शहर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का संसदीय क्षेत्र भी है। लिहाजा यहां की सफाई को लेकर वह खुद व्यक्तिगत रुचि ले रहे हैं। उन्होंने इसके लिए सूरत के नौसाड़ी सांसद सीआर पाटिल को बतौर दूत बनारस भेजा है। चुपचाप सफाई की रणनीति बनी। दोनों जगहों पर कार्यकर्ताओं की तीन–चार सदस्यीय टीमें बनाकर सफाई व्यवस्था की निगरानी का जिम्मा सौंपा गया। 15 फरवरी को सफाई की शुरुआत हुई फिर कुछ दिनों के भीतर ही लोगों ने मणिकर्णिका घाट का कायाकल्प होते देखा। इस सफाई में केवल वाराणसी ही नहीं बल्कि यहां आने वाले विदेशी लोगों ने भी योगदान दिया। सफाई का आलम ये रहा कि कई लोगों ने तो कोई 30–35 साल बाद महाश्मशान की अंतिम सीढ़ी को भी इस कदर साफ देखा। इसे लगातार जारी रखा जा रहा है। आसपास के इलाकों की दिनभर में दो बार सफाई की जा रही है। वाराणसी के दूसरे घाटों की भी इसी तरह सफाई हो रही है। अगर आप अब कभी वाराणसी जाएं तो उसके घाटों को सफाई के मामले में एकदम बदला हुआ पाएंगे।

अमृतसर में सफाई का अनोखा सॉफ्टवेयर

तकनीक की तरक्की का असर हर जगह नजर आता है। लिहाजा ये स्वच्छता अभियान में भी दिख रहा है। अमृतसर में एक ऐसा सॉफ्टवेयर विकसित किया गया है, जो कूड़ादान भर जाने की तुरंत सूचना एसएमएस के जरिए मोबाइल पर भेजता है। यही नहीं इसके जरिए कूड़ेदान के टूटने से लेकर चोरी होने तक की हर खबर भी एसएमएस से तुरंत मिलेगी। ऐसा अनोखा सॉफ्टवेयर अमृतसर की मीनल ने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की ओर से दो अक्टूबर, 2014 को शुरू किए गए स्वच्छ भारत, स्वस्थ भारत अभियान से प्रेरित होकर तैयार किया।

जारी है गंगा स्वच्छता अभियान

गंगा में प्रदूषण रोकने के लिए सरकार ने निर्मल गंगा सहभागिता कार्यक्रम के रूप में पहल की है। इसके तहत केंद्र सरकार गंगा किनारे की 118 नगर पंचायतों, नगरपालिकाओं और नगर निगमों के साथ मिलकर कार्यक्रम चलाएगी। इस पहल की खास बात यह है कि इसके तहत बेरोजगार युवाओं को रोजगार देकर गंगा के किनारों पर गंदगी रोकने के काम में लगाया जाएगा।

निर्मल गंगा सहभागिता के तहत 118 स्थानीय निकाय घाटों के आसपास साफ–सफाई सुनिश्चित करने व गंगा में गिरने वाले नालों पर नजर रखने का काम करेंगे। साथ ही गंगा के किनारे 500 मीटर क्षेत्र को बिल्कुल स्वच्छ रखा जाएगा और वहां किसी भी तरह का कूड़ा गिराने की इजाजत नहीं होगी। जल संसाधन मंत्रालय ने गंगा को स्वच्छ बनाने के लिए आस्ट्रेलिया के साथ जर्मनी, चीन, नेपाल और बांग्लादेश से सहयोग के लिए बातचीत की है। कई ने तकनीकी सहायता देने का भी वादा किया है।

साथ ही, राष्ट्रीय गंगा नदी बेसिन प्राधिकरण की पहल पर गंगा को निर्मल बनाने के लिए गंगावाहिनी का भी गठन होगा। इसकी चार बटालियनें होंगी। हर बटालियन का नेतृत्व सैनिक अधिकारी करेंगे। हर बटालियन में 350 से 500 जवान होंगे। इसकी शुरुआत कानपुर, वाराणसी और इलाहाबाद में की जाएगी। इसमें पूर्व सैनिकों के साथ छात्र, मछुआरे, नाविक, आईटी पेशेवर, एनसीसी व स्काउट गाइड के कैडेट्स शामिल होंगे। इस निगरानी तंत्र के लिए 75 करोड़ रुपये खर्च होंगे।

प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के स्वच्छ भारत अभियान के ब्रांड एम्बेसेडर और उद्योगपति अनिल अंबानी के संरक्षण में प्रसिद्ध बद्रीनाथ धाम में सफाई अभियान शुरू हो गया है। अप्रैल के अंतिम सप्ताह में मंदिर के कपाट खुलने के बाद से बद्रीनाथ धाम के समीप अलकनंदा तट और नारदकुंड की सफाई का नियमित अभियान शुरू हो चुका है।

(लेखक स्वतंत्र प्रत्रकार हैं)
ई–मेलः sanjayrotsn@gmail.com0

ग्रामीण जनता की प्रगति में बाधक फ्लोरोसिस रोग

—डॉ. दुर्गादत्त ओझा

एक सर्वेक्षण के अनुसार हमारे देश में 5 करोड़ से अधिक लोग फ्लोराइड-जनित रोगों से पीड़ित हैं। यह अत्यन्त ही चिन्तनीय विषय है कि देश की लगभग 5 प्रतिशत जनसंख्या फ्लोराइड विषाक्तता की चपेट में है। इसका मुख्य कारण है जल में फ्लोराइड की अधिकता। इस दिशा में सबसे प्रभावी कदम जनमानस में फ्लोराइड चेतना जाग्रत करना है क्योंकि जब तक देशवासियों में विशेषतः ग्रामीण समुदाय में उनकी बोलचाल की भाषा में पोस्टरों, रेडियो, दूरदर्शन, नाटक आदि विधाओं के द्वारा चेतना जाग्रत नहीं होगी तब तक आशान्वित लाभ प्राप्त नहीं होगा। इस राष्ट्रीय कार्यक्रम में प्रत्येक देशवासी का सहयोग अपेक्षित है।

फ्लोरोसिस को प्रभावित करने वाले कारक

यद्यपि फ्लोरोसिस का प्रत्यक्ष एवं मुख्य कारण फ्लोराइड है तथापि अप्रत्यक्ष कारण पीने के पानी में क्षारीयता, कैल्शियम, भोजन में विटामिन सी, एल्यूमिनियम, फोस्फेट आदि का मानव शरीर में आवश्यकता से अधिक पहुंचना है।

फ्लोराइड — जैसाकि विदित है, फ्लोराइड मुख्यतः भूजल में पाया जाता है, जोकि पृथ्वी की सतह पर चट्टानों और मिट्टी की घुलनशील क्रिया के फलस्वरूप आसपास की मिट्टी में से निकल आता है। तेज गति से चट्टानों और मिट्टी के छनने के माध्यम से निकलने वाला पानी, चट्टानो से पानी के टकराने के समय का तापमान, हाइड्रोजन और कैल्शियम, आयरन की सान्द्रता पीने के पानी में फ्लोराइड की मात्रा को निर्धारित करती है। मछलियों, चाय, कपास के बीज तथा कुछ प्रकार की शराब में अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में फ्लोराइड पाया जाता है। इसी प्रकार कैंसर, अस्थिक्षरण एवं चुनिंदा हार्मोन संबंधी रोगों के इलाज हेतु काम में ली जाने वाली दवाइयों, कुछ प्रकार की निश्चेतक दवाइयों तथा फ्लोराइडयुक्त कार्टिकोस्टीरॉइड्स में फ्लोराइड पाया जाता है जिसका शरीर में उपापचय हो सकता है।

क्षारीयता — क्षारीयता तथा फ्लोरोसिस में प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। जिस पानी में फ्लोराइड 2 मि.ग्रा./लीटर से अधिक होता है, उसमें कम कठोरता एवं उच्च क्षारीयता होती है। प्रायः क्षारीयता का कारण अत्यधिक बाइकार्बोनेट का होना है। प्राकृतिक जल में कार्बोनेट तथा बाइकार्बोनेट ही वे मुख्य पदार्थ हैं, जो चट्टान बनाने वाले खनिजों में फ्लोराइड को अपने साथ बहा लाते हैं।

फास्फेट — कैल्शियम हमारी आंतों में फ्लोराइड के अवशोषण को कम करता है, जबकि फॉस्फेट कैल्शियम के इस प्रभाव को बदलते हुए फ्लोराइड का अवशोषण बढ़ा देता है।

एलुमिनियम — एलुमिनियम का मानव शरीर पर वैसे ही बुरा प्रभाव पड़ता है, परंतु एलुमिनियम के फ्लोराइड के साथ मिलने पर इसका प्रभाव और अधिक घातक हो जाता है, क्योंकि पानी को शुद्ध करने में एलुमिनियम के लवण का प्रयोग संघटक के

रूप में सामान्य है। अतः फ्लोराइड हटाने की प्रक्रिया में लगे लोगों को एलुमिनियम के घातक प्रभावों से सावधान रहना चाहिए।

विटामिन 'सी' – यह देखा गया है कि जो बच्चे विटामिन 'सी' कम लेते हैं उनमें गंभीर किस्म का फ्लोरोसिस हो जाता है। खट्टे फल फ्लोराइड के घातक प्रभाव को कम करते हैं, इसलिए फ्लोरोसिस से ग्रसित क्षेत्रों में ताजे फल खाने की सलाह दी जाती है।

आयु – यह देखा गया है कि आयु बढने के साथ फ्लोराइड से प्रभावित क्षेत्रों में दंत क्षरण और हड्डियों का फ्लोरोसिस भी बढ़ जाता है। सामान्यतया उम्र के तीसरे दशक के अंत तक फ्लोरोसिस का असर सर्वाधिक व्यापक हो जाता है तथा फिर यह स्थिति स्थिर बनी रहती है। अधिक प्रभावित क्षेत्रों में लोगों के दांत चालीस पैतालीस वर्ष की आयु में ही टूट जाते हैं तथा उनमें कुबड़ापन भी आ जाता है।

स्थान परिवर्तन एवं लिंगग – फ्लोरोसिस का प्रभाव महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों में अधिक होता है। महिलाओं में विवाह के पश्चात् स्थान परिवर्तन होने से फ्लोरोसिस होने के आसार तुलनात्मक रूप से कम हो जाते हैं। एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के बावजूद यह महिलाओं को कम प्रभावित करता है। ऐसी भी मान्यता है कि पुरुषों में इसके अधिक होने का कारण कठिन परिश्रम के फलस्वरूप अधिक मात्रा में पानी पीना भी है, परंतु यह भी प्रेक्षित किया गया है कि महिलाएं गर्भ के समय तथा बच्चों को दूध पिलाने के समय शरीर में कैल्शियम की कमी के कारण इससे अधिक प्रभावित होती हैं।

तापमान – मानव में फ्लोराइड प्रवेश का मुख्य स्रोत पानी है। प्रतिदिन उपभोग किए जाने वाले पेयजल की मात्रा मुख्यतः तापमान पर निर्भर करती है। यह तापमान जगह की स्थिति, वायु की दिशा तथा समुद्र तल से निकटता पर निर्भर करता है। यह भी देखा गया है कि गरमी वाले क्षेत्रों में फ्लोरोसिस का प्रकोप प्रायः अधिक होता है।

पान मसाला एवं फ्लोरोसिस – पान तथा गुटखा खाने वालों को सामान्यतया यह पता होता है कि गुटखे के साथ लिया गया तंबाकू कैंसर का एक बड़ा कारण होता है। परंतु बहुत कम लोगों को यह पता होगा कि प्लास्टिक की इन पुड़ियों में इतना फ्लोराइड होता है कि रोज खाने वालों को फ्लोरोसिस जैसी बीमारियां भी हो सकती हैं। यह तथ्य भारतीय उपमहाद्वीप के लोगों के लिए विशेष महत्व का है, क्योंकि पान या गुटखा यहां विश्व के किसी अन्य क्षेत्र की अपेक्षा कही अधिक खाया जाता है। गुटखा ग्रामीण व शहरी जनता दवारा खाए जाने वाला मुख्य पदार्थ है।

यह प्रेक्षित किया गया है कि दिन में एक पुड़िया (5 ग्राम) खाने वाले व्यक्ति के शरीर में 0.2 मि.ग्रा. फ्लोराइड केवल गुटखे के माध्यम से पहुंचता है। सामान्य लती व्यक्ति एक दिन में चार–पांच पुड़ियां गुटखा खा जाता है, अतः उनके शरीर में प्रतिदिन 1 मि.ग्रा. फ्लोराइड केवल इस माध्यम से ही पहुंचता है। चूंकि फ्लोराइड पेयजल तथा अन्य खाद्य सामग्रियों में भी विद्यमान रहता है, अतः पान–गुटखा इत्यादि के माध्यम से ली गई अतिरिक्त फ्लोराइड की मात्रा शरीर के लिए घातक सिद्ध हो सकती है।

दंत फ्लोरोसिस – फ्लोराइड की अल्पमात्रा दांतों के इनेमल को मजबूत करती है जो दांतों को संक्रमण व क्षय होने से बचाती है। दंत इनेमल की सुरक्षा के लिए यह आवश्यक है कि पेयजल में फ्लोराइड की सीमा 1.5 मि.ग्रा./लीटर तक हो जिसके कारण दांत क्षय होने से बचता है तथा मानव स्वास्थ्य पर भी कोई कुप्रभाव नहीं पड़ता है। परंतु 1.5 मि.ग्रा./लीटर की सीमा पार होने पर मानव दंत फ्लोरोसिस से प्रभावित हो जाता है। इस बीमारी में दांतों में धब्बे तथा गड्डे पड़ जाना आम बात है। बच्चे इसकी चपेट में तुरंत ही आ जाते हैं। वयस्क भी इसकी चपेट में आ जाते हैं। यदि पेयजल में इसकी मात्रा 1.5 मि.ग्रा./लीटर तक हो जाए। इससे थोड़ी–सी भी ज्यादा मात्रा (4.0 मि.ग्रा/लीटर तक) मानव शरीर में लम्बे समय तक पेयजल के द्वारा जाने पर शारीरिक लचक खत्म होने लगती है जिससे अस्थियों तथा जोड़ों में कठोरता आ जाती है। परन्तु यदि घुलनशील फ्लोराइड की अधिक मात्रा पेयजल के द्वारा दांतों के निर्माण के दौरान लगातार ग्रहण किया जा रहा हो तो दांतों के इनेमल धब्बेदार होने लगते हैं। इनेमल का मुख्य कार्य डेंटिन की सुरक्षा है तथा उससे क्षय व संक्रमण से बचाना है परन्तु दंत फ्लोरोसिस की अवस्था में सुरक्षा चक्र टूट जाता है। और दांतों की संरचना पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। दंत फ्लोरोसिस होने पर दांतों की प्राकृतिक चमक तथा सुन्दरता नष्ट हो जाती है। प्रारंभिक अवस्था में दांत चॉक के समान खुरदरा सफेद हो जाता है जो बाद में धीरे–धीरे पीला, कत्थई तथा काले रंग का हो जाता है। यह मसूड़ों से थोड़ी दूर दांतों की सतह पर मोटी लकीर के रूप में दिखता हैं। रोग पुराना होने पर दांतों की सतह पर छोटे–छोटे छिद्र बन जाते हैं जिनकी भराई नहीं हो पाती है। दंत फ्लोरोसिस दांतों की अंदरूनी तथा बाहरी दोनों सतह पर होता है तथा एक बार इसकी गिरफ्त में आने पर यह लाइलाज हो जाता है। दंत फ्लोरोसिस केवल शारीरिक सुन्दरता को ही नहीं प्रभावित करता है बल्कि यह एक सामाजिक समस्या भी है जिसके कारण वैवाहिक संबंधों पर भी असर पड़ता है।

साधारण पेयजल में फ्लोराइड की मात्रा अधिक होने पर मानव शरीर में फ्लोराइड अस्थियों से हाइड्रोक्साइड को हटाकर खुद जमा हो जाता हैं और अस्थि फ्लोरोसिस को जन्म देता है।

मानव शरीर में फ्लोराइड पेयजल, के अतिरिक्त मुख्यतः भोजन, वायु, दवाईयों तथा प्रसाधनों के द्वारा भी प्रवेश करता है। लेकिन लगभग 60 प्रतिशत पेयजल द्वारा ही शरीर में प्रविष्ट होता है। हमारे देश में यह देखा गया है कि फ्लोराइड चाय, फ्लोराइडयुक्त टूथपेस्ट और अत्यधिक घुलनशील फ्लोराइडयुक्त पेयजल के द्वारा मानव शरीर में प्रविष्ट होता है। शीतल पेयों द्वारा भी फ्लोराइड हमारे शरीर में पहुंचता है।

लाल रक्त कोशिकाएं – फ्लोरोसिस का प्रभाव इन पर भी पड़ता है। फ्लोराइड इनकी झिल्लियों पर जमा हो जाता है, जिससे इनमें कैल्शियम की मात्रा में कमी हो जाती है। इससे प्रभावित लाल रक्त कोशिकाएं रोगी के शरीर में रक्त अल्पता का रोग उत्पन्न करती हैं।

आंतों में श्लेष्मा – यह फ्लोरोसिस के प्रारम्भिक चरणों में ही हो जाता है। इसके लक्षण में उल्टी होना, भूख का मर जाना, पेट में दर्द, गैस का बनना, पेट फूलना, सिर दर्द तथा कब्ज होना है।

शुक्राणुओं में असामान्यता – यह भी देखा गया है कि शुक्राणुओं के फ्लोरोसिस से प्रभावित होने के कारण पुरुषों में नपुंसकता आ जाती है। इससे वीर्य में शुक्राणुओं की कमी या अनुपस्थिति का रोग हो जाता है। प्रभावित व्यक्तियों के रक्त में टेस्टोस्टेरॉन की कमी भी देखी गई है।

कृषि प्रधान देश तथा उष्ण कटिबंध में होने के कारण भारत में कृषि कार्य वाले मजदूरों को ज्यादातर दिन में कठोर श्रम करना पड़ता है और ज्यादा पानी पीना पड़ता है। क्योंकि उनकी आमदनी भी कम होती है इसलिए वे पौष्टिक भोजन की तो कल्पना भी नहीं कर सकते। इन सब कारणों से फ्लोराइड युक्त पानी लगातार पीने पर उनके शरीर की प्रतिरोधक शक्ति कम हो जाती है।

विभिन्न खाद्य पदार्थों में फ्लोराइड की उपलब्ध मात्रा को सारणी–2 में तथा सारणी–3 में तथा फ्लोराइड की अधिक मात्रा के जैविक प्रभावों का विवरण दिया गया है।

पेड़–पौधे भी प्रभावित

फ्लोराइड की अधिकता लोरेराइड से उत्पन्न पादक रोग से केवल मानव ही नहीं वरन् वनस्पतियां भी फ्लोराइड विषाक्तता की शिकार हो जाती हैं। उनमें निम्न रोगों की प्रबल संभावना होती है–

पत्तियों के किनारों तथा शीर्षों का सूखना; विकास अवरोध; आनुवांशिक परिवर्तन; कोशिका क्षय; हरीतिमा क्षति; ब्रोजिंग तथा ग्लेजिंग।

फ्लोराइड तथा पशु स्वास्थ्य

फ्लोराइड के मानव स्वास्थ्य पर कुप्रभाव की संभावना को पशुओं में अस्थि संबंधी विकृतियों के साथ भी जोड़ा जा सकता है, क्योंकि यह फ्लोराइड प्रदूषण का संकेत देने वाली हो सकती हैं। पशुओं में कंकालीय फ्लोरोसिस के प्रमाण हाइपरस्टोसिस, ओस्टियोपेट्रोसिस तथा ऑस्टियोपोरोसिस जैसी अस्थि विकृतियों के रूप में सामने आए हैं। कनाडा के कौर्नवेल द्वीपसमूह के खेतों में चरने वाले पशुओं में चिरस्थाई फ्लोरोसिस के लक्षण पाए गए हैं तथा इनकी अस्थियों, रक्त व मूत्र में फ्लोराइड की मात्रा के इस विकृति के सीधे संबंध की पुष्टि भी होती है। यह भी पाया गया है कि अकार्बनिक फ्लोराइड द्वारा अस्थि संरचना संबंधी परिवर्तन विभिन्न प्राणियों में भिन्न–भिन्न होते हैं।

प्रायः देखा गया है कि अन्य जानवरों की अपेक्षा गाय, भैंस फ्लोराइड के प्रति अत्यधिक संवेदनशील हैं। भेड़, घोड़े, सूअर, खरगोश, चूहे तथा कुक्कुट इनके बाद आते हैं। गाय, भैंस में फ्लोराइड के प्रति संवेदनशीलता उनमें ऋणात्मक कैल्शियम संतुलन के कारण होती है जोकि प्रायः दुधारू गायों में बच्चा जनने के बाद के दुग्धजनन काल में अधिक होता है। लगातार फ्लोराइड युक्त चारा खाने से गायों के दुग्ध उत्पादन में भी कमी आ सकती है। फ्लोराइड युक्त चारा खाने से गायों में अस्थि संबंधी बीमारियों के अलावा दांतों का मुड़ना, उनका पीला होना या भंजित होना, प्रजनन में कमी आना, दुग्ध उत्पादन में कमी आना आदि समस्याएं पैदा होती हैं। हमारे देश में भी जानवरों के चारागाह में फ्लोराइड जांच यंत्र रखे जा चुके हैं।

फ्लोरोसिस से पीड़ित व्यक्ति की प्रारंभिक पहचान

जल में फ्लोराइड निर्धारित सीमा से ज्यादा होने से यह फ्लोराइड एक धीमी गति वाले विषाक्त पदार्थ के समान कार्य करता है तथा शरीर के भीतर की कार्यप्रणाली को सुचारू रूप से चलाने वाली क्रियाओं तथा उनके अंगों का गतिरोध करता है। परिणामस्वरूप कुछ समय में इसका प्रभाव शरीर के विभिन्न अंगों में दिखलाई देने लगता है। फ्लोरोसिस की प्रारंभिक अवस्था में ज्यादातर लोगों में निम्नलिखित लक्षण दिखलाई देते हैं।

- मरीज अपने हाथों से पैरो के पंजो को छू नहीं सकता।
- ठोडी से छाती को छू नहीं सकता।
- गले के पीछे से दोनों हाथ नहीं जोड़ सकता।
- एक पैर के बल खड़े होने में कम्पन्न होता है तथा
- असमर्थ होने लगता है।
- शरीर में कम्पन्न होता है तथा थक जाता है।
- मांसपेशियों, जोड़ों तथा हड्डियों में तेज दर्द होता है।
- दांत पीले होने लगते हैं।

फ्लोरोसिस की रोकथाम एवं नियंत्रण

फ्लोरोसिस की देशव्यापी समस्या की रोकथाम एवं नियंत्रण हेतु निम्न सुझाव हैं–

वर्षा जल संरक्षण

हमारे देश के अनेक भागों में सदियों से वर्षा जल का संग्रहण किया जाता रहा है। सामुदायिक स्तर पर एनिकट व बांध का निर्माण तथा घरेलू स्तर पर वर्षाजल के संग्रह से बहुत राहत मिल सकती हैं। एनिकट व बांधों से जहां मवेशियों को राहत मिल सकती है, वहीं घरेलू जलसंग्रह से मानव जाति को लाभ मिल सकता है। देश के कई भागों में वर्षा के समय छत से गिरने वाले पानी के संग्रह के लिए विभिन्न सरकारी व गैर–सरकारी भवनों में इस प्रकार की व्यवस्था की गई है तथा इससे लाभ भी हुआ है।

आहार परिवर्तनन

यह प्रेक्षित किया गया है कि यदि फ्लोराइड की अधिक मात्रा वाले क्षेत्रों में रहने वाले लोग अपने आहार में कुछ परिवर्तन कर ले तो उन्हें फ्लोरोसिस की समस्या से मुक्ति पाने में मदद मिल सकती है।

"विटामिन सी" फ्लोरोसिस को बढ़ने से रोकता है। अतः लोगों को जानकारी देनी चाहिए कि वे आंवला, नींबू, संतरा, टमाटर, अंकुरित अनाज, दालों इत्यादि को अपने आहार में शामिल करे। कैल्शियम की अधिक मात्रा फ्लोराइड को कम करती है। अतः फ्लोरोसिस प्रभावित क्षेत्र में कैल्शियम की भरपूर मात्रा वाला आहार लेने की सिफारिश की जाती है। इसमें मीठी दही, दूध, पत्तों वाली सब्जियां, इत्यादि शामिल हैं। पपीता, कद्दू, अदरक तथा हरे पत्ते वाली सब्जियों का सेवन करना चाहिए। विटामिन 'ई' भी रोग निरोधक की भूमिका निभाता है। अतः सभी तरह का अनाज, खाद्य तेल एवं सूखे सम आदि का सेवन लाभदायक रहता है।

पेयजल से फ्लोराइड दूर करना

पेयजल से फ्लोराइड हटाने की दो विधियां हैं–अवक्षेपण एवं अधिशोषण। अवक्षेपण विधि में फिटकरी जमाव तथा नालगोंडा तकनीक शामिल हैं।

फिटकरी आधारित नालगोंडा विधि में कुएं अथवा अन्य स्रोत से पानी 20–60 लीटर वाले प्लास्टिक के बर्तन में भर लिया जाता है। इसमें तली में 3–5 सेमी. ऊंचाई पर एक नल लगा देते है। पानी की क्षारीयता के अनुसार, उसमें उचित मात्रा में चूना एवं फिटकरी मिलाई जाती है। दस मिनट तक इस घोल को हिलाने के बाद एक घंटा स्थिर छोड़ दिया जाता है, फिर पानी को निथारकर अलग कर लिया जाता है तथा अशुद्धियों को नल द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है।

इस प्रक्रिया से शुद्ध किया हुआ जल पीने के लिए उपयुक्त होता है। इस विधि में दस लीटर प्रति व्यक्ति के आधार पर 6 सदस्यों के परिवार को वर्ष भर पानी शुद्ध करने के लिए अत्यल्प रुपये ही खर्च करने पड़ते हैं। यह विधि कम खर्चीली तथा सुविधाजनक है।

एक्टिवेटेड एल्यूमिना विधि में पॉली एलुमिनियम क्लोराइड (पी.ए.सी) के घोल को क्षारीयता अनुसार जल में मिलाकर तथा दस मिनट तक हिलाकर रखते हैं। इसके पश्चात् इसे निथार लेते हैं।

आई.आई.टी. कानपुर ने पी.ए.सी. फिल्टर भी विकसित किए हैं, जो लाभदायक हैं।

फ्लोरोसिस नियंत्रण के सरकारी प्रयास

हमारे देश में राष्ट्रीय स्तर पर फ्लोरोसिस नियंत्रण हेतु कई संस्थान कार्य कर रहे हैं जिनमें सी.एस.आई.आर के सी. एस.एम. सी.आर.आई, भावनगर, नीरी–नागपुर, एन.सी.एल, पुणे, बी.ए.आर. सी,मुंबई एन.आई.एन. हैदराबाद अनेक विश्वविद्यालयों में इस देशव्यापी समस्या के हेतु शोधकार्य हो रहा है। अनेक राज्य सरकारों ने फ्लोरोसिस नियंत्रण हेतु हैंडपम्प के साथ में संयंत्र स्थापित किए हैं। नैनो मेम्ब्रेन भी तैयार की गई है जिनका उपयोग फिल्टरों में किया जा रहा है।

इस कार्य में सबसे प्रभावी कदम जनमानस में फ्लोराइड चेतना जाग्रत करना है क्योकि जब तक देशवासियों में विशेषतः ग्रामीण समुदाय में उनकी बोलचाल की भाषा में पोस्टरों, रेडियो, दूरदर्शन, नाटक आदि विधाओं के द्वारा चेतना जाग्रत नहीं होगी, तब तक आशान्वित लाभ नहीं प्राप्त होगा। इस राष्ट्रीय कार्यक्रम में प्रत्येक देशवासी का सहयोग अपेक्षित है।

(वरिष्ठ विज्ञान संचारक एवं लेखक)
ई–मेलः ddozha@gmail.com

मलेरिया : ग्रामीण समाज के लिए एक बड़ी चुनौती

—डॉ अर्चना द्विवेदी

मलेरिया का विस्तार वितरण समझना थोड़ा जटिल है क्योंकि मलेरिया प्रभावित तथा मलेरिया मुक्त क्षेत्र प्रायः साथ-साथ होते हैं। सूखे क्षेत्रों में इसके प्रसार का वर्षा की मात्रा से गहरा संबंध है। डेंगू बुखार के विपरीत यह शहरों की अपेक्षा गांवों में ज्यादा फैलता है। मलेरिया के सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव को स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है, क्योंकि यह गरीबी से जुड़ा तो है ही, साथ ही साथ अपने आप में स्वयं गरीबी का कारण है, तथापि आर्थिक विकास में बाधक है। स्वच्छ भारत अभियान के संदर्भ में मलेरिया पर विचार करना प्रासंगिक होगा। यह समूची दुनिया के ग्रामीण समाज के लिए एक भयंकर जन-स्वास्थ्य समस्या है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार विश्व में प्रतिवर्ष लगभग 3.4 अरब लोग मलेरिया के खतरे के भय में जीते हैं। हर वर्ष लगभग 20 करोड़ 70 लाख मलेरिया के रोगी सामने आते हैं जिनमें अनुमानतः 6 लाख से अधिक की मृत्यु हो जाती है। समाज वैज्ञानिक मलेरिया को गरीबी से जोड़कर देखते हैं और इसे गरीबी का एक कारण मानते हुए आर्थिक विकास का बाधक स्वीकार करते हैं।

यह रोग प्लास्मोडियम के प्रोटोजोआ परजीवी के माध्यम से फैलता है। केवल चार प्रकार के प्लास्मोडियम मनुष्य को प्रभावित करते हैं जिनमें सर्वाधिक खतरनाक प्लास्मोडियम फैल्सीपैरम तथा प्लास्मोडियम विवैक्स माने जाते हैं। साथ ही प्लास्मोडियम ओवेल तथा प्लास्मोडियम मलेरिया भी हमारे जीवन को प्रभावित करते हैं। इन चारों को सामूहिक रूप से मलेरिया परजीवी कहते हैं जिनका वाहक मादा एनोफिलेज मच्छर है जिसके काटने पर मलेरिया परजीवी लाल रक्त कोशिकाओं में प्रवेश कर तेजी से बहुगुणित होते हैं जिससे रक्तहीनता (एनीमिया) के लक्षण उभरते हैं। जैसे सांस फूलना, चक्कर आना, धड़कन तेज होना आदि। इसके अतिरिक्त कंपकंपी लगकर बुखार आना, उबकायी और

जुखाम जैसी समस्याएं दिखाई पड़ती हैं। गम्भीर मामलों में मरीज बेहोशी में जा सकता है और उसकी मृत्यु भी हो सकती है।

मलेरिया रोग के लक्षण तथा पहचान – मलेरिया का सबसे आम लक्षण तथा पहचान है कि अचानक तेज कंपकंपी के साथ सर्दी लगना, जिसके फौरन बाद तेज बुखार आता है। चार से छः घंटे के बाद बुखार उतरता है और पसीना आता है। प्लास्मोडियम फैल्सीपैरम के संक्रमण में यह पूरी प्रक्रिया प्रत्येक 36 से 48 घंटे में होती है। कभी–कभी लगातार बुखार रह सकता है। प्लास्मोडियम विवैक्स और प्लास्मोडियम ओबेल से होने वाले मलेरिया में प्रत्येक 2 दिन में बुखार आता है। इनमें प्लास्मोडियम फैल्सीपैरम से संक्रमित मलेरिया ज्यादा गम्भीर होता है जिसमें 6 से 14 दिन बाद तिल्ली और यकृत का आकार बढ़ना, तेज सिरदर्द और खून में ग्लूकोज की कमी भी हो जाती है। अन्य गम्भीर लक्षण हैं– मूत्र में हीमोग्लोबिन का उत्सर्जन, और इससे गुर्दों की विफलता तक हो सकती है, जिसे कालापानी ब्लैक वाटर फीवर कहते हैं। गम्भीर मलेरिया में मूर्छा या मृत्यु भी हो सकती है। युवा बच्चे तथा गर्भवती महिलाओं में ऐसा होने का खतरा बहुत ज्यादा होता है। अन्यंत गम्भीर मामलों में मृत्यु कुछ घंटों तक में हो सकती है। गम्भीर मामलों में उचित इलाज होने पर भी मृत्यु दर 20 प्रतिशत तक हो सकती है। महामारी वाले क्षेत्र में प्रायः उपचार संतोषजनक नहीं हो पाता, अतः मृत्यु दर काफी ऊंची होती है। मलेरिया विकासशील मस्तिष्क को गम्भीर क्षति पहुंचा सकता है। लम्बे समय में मलेरिया से उपचारित बच्चों में प्रायः अल्प मानसिक विकास देखा जाता है। बच्चों में दिमागी मलेरिया होने की सम्भावना अधिक रहती है जो मस्तिष्क को सीधे हानि पहुंचाती है। गर्भवती स्त्रियों के मामले में इसकी गम्भीरता और अधिक है। मलेरिया से गर्भ की मृत्यु, निम्न जन्मभार और गर्भस्थ शिशु की मृत्यु तक हो सकती है।

मलेरिया के कारण – मलेरिया फैलने का स्थानीय कारण है बरसात के मौसम में गांव के गली–मोहल्ले आदि स्थानों पर नालियों का सही तरीके से निकास नहीं होने के कारण कीचड़/

गन्दगी का फैलना/बरसात का पानी इकट्ठा होना। जिससे मच्छरों की तादाद बहुत तेजी से बढ़ती है जो शीघ्र ही मलेरिया, डेंगू जैसी बीमारियों का कारण बनती है। प्रशासनिक स्तर पर मलेरिया की रोकथाम के लिए गठित टीम में अनेक पदों के रिक्त होने से मलेरिया की रोकथाम नहीं हो पाती है।

मलेरिया की रोकथाम – मलेरिया की रोकथाम के लिए प्रभावित क्षेत्र का सर्वे प्लान तैयार कर सर्वे करवाना, ब्लड स्लाइड बनाना, ब्लड स्लाइडों की 24 घंटे के अन्तराल में जांच करवाना तथा मरीज को उचित इलाज के लिए अस्पताल में भेजना, प्राथमिक स्तर पर रोकथाम के लिए अपेक्षित है।

मलेरिया मुक्त जिला या क्षेत्र कैसे बनाया जा सकता है? इसके उत्तर में यह बताया जा सकता है कि अधिक से अधिक स्लाइड बनाकर जांच की जाए और बरसात के मौसम में पानी एवं कीचड़ को शीघ्र सुखाया जाए अथवा नालियों की उचित ढकान व्यवस्था की जाए, जिससे मच्छर के लार्वा तैयार न हो सके। साथ–साथ घर एवं सार्वजनिक स्थल की दीवारों पर डी.डी.टी. आदि का छिड़काव किया जाए जिससे यदि मच्छर दीवारो पर बैठे तो शीघ्र बेहोश हो जाए या मर जाएं। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने मलेरिया प्रभावित क्षेत्रों में छिड़काव के लिए लगभग 12 दवाओं को मान्यता दी है। इनमें डी.डी.टी. के अलावा परमैथ्रिन और डेल्टामैथ्रिन जैसी दवाएं शामिल हैं। विशेषतौर से यह दवाएं उन क्षेत्रों के लिए प्रभावी हैं जहां मच्छर डी.डी.टी. से प्रतिरोधक क्षमता विकसित कर चुके हैं।

एक अन्य उपाय मच्छरदानियों का प्रयोग मलेरिया से बचाव के लिए अपनाया जा सकता है। एनोफिलीज मच्छर चूंकि रात को काटता है इसलिए बड़ी मच्छरदानी को चारपाई/बिस्तर पर लटका देने तथा इसके द्वारा बिस्तर को चारों तरफ से पूर्णतः घेर देने से सुरक्षा पूरी हो जाती है। मच्छरदानियां अपने आप में बहुत प्रभावी उपाय नहीं हैं किन्तु यदि उन्हें रासायनिक रूप से उपचारित कर दे तो वे बहुत उपयोगी हो जाती हैं। मलेरिया–प्रभावित क्षेत्रों में मलेरिया के प्रति जागरुकता फैलाने से मलेरिया में 20 प्रतिशत तक की कमी देखी गई है। साथ ही मलेरिया का निदान और इलाज जल्द से जल्द करने से भी इसके प्रसार में कमी होती है। अन्य प्रयासों में शामिल हैं–मलेरिया संबंधी जानकारी इकट्ठी करके उसका बड़े पैमाने पर विश्लेषण करना और मलेरिया नियंत्रण के तरीके कितने प्रभावी हैं इसकी जांच करना। ऐसे एक विश्लेषण में पता लगा कि लक्षण–संक्रमण वाले लोगों का इलाज करना बहुत आवश्यक होता है, क्योंकि इनमें बहुत मात्रा में मलेरिया संचित रहता है।

मलेरिया की रोकथाम के लिए स्थानीय–स्तर (जिला–स्तर, खण्ड–स्तर, सामुदायिक/प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र–स्तर पर) रेपिड रेस्पोन्स टीम द्वारा सर्वे करवाना, एन्टीलार्वा गतिविधियां करवाना, पायरेथम स्प्रे करवाना, फोगिंग स्प्रे का कार्य करवा के मलेरिया को रोका जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुरक्षा संदेश पेम्पलेटों, पोस्टरों के माध्यम से शिक्षा विभाग, पंचायत विभाग के सहयोग से जन–जन तक मलेरिया के प्रति जागरुकता एवं स्वच्छता संदेश पहुँचाया जा सकता है। इस संदर्भ में माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र भाई मोदी जी का 'स्वच्छ भारत, स्वस्थ भारत' अभियान मलेरिया की रोकथाम की सार्थक पहल हो सकता है। स्कूली बच्चों के पाठ्यक्रम में स्वास्थ्य शिक्षा के अन्तर्गत इन बीमारियों के कारण एवं रोकथाम के बारे में बताकर के भी पहल की जा सकती है।

मलेरिया की रोकथाम हेतु भावी शोध एवं योजनाएं – यद्यपि आज मलेरिया का प्रभावी उपचार उपलब्ध है, लेकिन दुनिया के अनेक विकासशील एवं गरीबी वाले देशों में यह सहज सुलभ नही हो पा रहा है। महंगा होने के कारण आम आदमी इसका उपयोग नहीं कर पाता है। एक अन्य समस्या यह भी है कि मलेरिया की दवाओं की बढ़ती मांग को देखकर अनेक मलेरिया प्रभावित देशों/क्षेत्रों, जिलों आदि में बड़े पैमाने पर नकली एवं प्रभावहीन दवाओं का व्यापार एवं विक्रय होता है, जो जीवन और धन की हानि का कारण बनता है। पुराने एवं क्षेत्रीय कानूनों से इस समस्या का प्रभावी समाधान नहीं हो पा रहा है। अतः नकली दवाओं की रोकथाम के लिए मजबूत कानून की आवश्यकता है।

मलेरिया के प्रतिरोधक टीके विकसित किये जा रहे हैं जिनमें अभी तक सफलता नहीं मिली है। पहली बार टीके विकसित करने का प्रयास सन् 1967 ई. में चूहे पर प्रयोग कर किया गया था जिसे जीवित किन्तु विकिरण से उपचारित बीजाणुओं का टीका दिया गया। इसकी सफलता दर 60 प्रतिशत थी। एस.पी.एफ. 66 (अंग्रेजीः SPF66) पहला टीका था जिसका क्षेत्र परीक्षण हुआ, यह शुरू में सफल रहा किन्तु बाद में सफलता दर 30 प्रतिशत से नीचे जाने से असफल मान लिया गया। आज आर.टी.एस.एस/ए.एस.ओ 2 ए (अंग्रेजीः RTS.S/ASO2A) टीका परीक्षणों में सबसे आगे के स्तर पर है। आशा की जाती है कि प्लास्मोडियम फैल्सीपरम के जीनोम की पूरी कोडिंग मिल जाने से नयी दवाओं की और टीकों का विकास एवं परीक्षण करने में आसानी होगी।

सामाजिक एवं प्रशासनिक स्तर पर मलेरिया के निदान एवं इसकी गम्भीरता के बारे में ग्रामीण समाज लापरवाह है। रोकथाम के लिए प्रशासनिक पदों का वर्षों से रिक्त होना यह दर्शाता है। जिला स्तर पर मलेरिया संबंधी सांख्यिकी में महिलाओं आदि की संख्या भी उपलब्ध नहीं है जिससे प्रभावी रणनीति बनाने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। मलेरिया से प्रभावी ढंग से निपटने के लिए सरकार के साथ–साथ ग्रामीण समाज को भी कारगर प्रयास करने होंगे।

(पी.डी.एफ. इतिहास विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झालावाड़, राज.)

सफलता की कहानी

महिलाओं की जिंदगी संवारने की मुहिम

—संगीता यादव

गांवों के देश भारत में तमाम ऐसे लोग हैं जो खुद दुखों में रहने के बाद भी दूसरों को खुश रखने की भरसक कोशिश करते हैं। ऐसे लोगों को समाज में मान-सम्मान तो मिलता ही है। साथ ही उनकी जिंदगी का सफर भी काफी आसान हो जाता है। ऐसी ही एक महिला हैं बुंदेलखंड में फूला देवी। फूला देवी खुद दुखों से घिरी हैं। बीमारी की वजह से उनकी घर-गृहस्थी तबाह हो गई, लेकिन उन्होंने हार नहीं मानी। अब वह महिलाओं को स्वावलंबी बनाने के साथ ही उन्हें स्वास्थ्य और शिक्षा के प्रति जागरूक कर रही हैं। हर महिला को सेहत का ख्याल रखने को शिक्षित कर रही हैं।

हौंसला बुलंद हो तो हर मंजिल पर आसानी से पहुंचा जा सकता है। कुछ ऐसा ही कर दिखाया है बुंदेलखंड के बांदा जिले की रहने वाली फूला देवी ने। खुद कैंसर पीड़ित फूला अब अपने आसपास रहने वाली महिलाओं की जिंदगी संवारने में लगी हैं। घर में कक्षा लगाकर महिलाओं को साक्षर करती हैं तो करीब 50 से ज्यादा महिलाओं को आत्मनिर्भर भी बना चुकी हैं। **उनका एक ही मिशन है कि महिलाओं को सेहत के प्रति जागरूक किया जाए। उनका मानना है कि जब तक महिलाओं में सेहत को लेकर जागरुकता नहीं आएगी तब तक आधी आबादी की खुशहाली का सपना पूरा नहीं होगा।** जब महिलाएं स्वस्थ होंगी और अपनी सेहत का ख्याल रख पाएंगी तभी वह बच्चों एवं परिवार को संभालने के साथ ही समाज का ख्याल रख पाएंगी। फूलादेवी की कहानी संघर्ष से भरी है। लेकिन वह अपने आसपास रहने वाली महिलाओं को नई राह दिखा रही हैं। बिना किसी सरकारी या गैर–सरकारी संगठन की मदद के तीन दर्जन से ज्यादा अपने गांव की महिलाओं को साक्षर कर चुकी हैं। घरेलू कामकाजी महिलाओं का समूह बनाकर उन्हें बचत और जमा करने की राह दिखाई है। इतना ही नहीं उनकी हर क्लास में सेहत की अतिरिक्त क्लास चलती है। फूला बताती हैं कि वह विभिन्न शिविरों में चिकित्सकों को आमंत्रित करती हैं। पहले चिकित्सक बताते हैं कि गांव में रहने वाली महिलाएं किस तरह से थोड़ी–सी सावधानी बरत कर अपनी जिंदगी संवार सकती हैं और विभिन्न बीमारियों से खुद और अपने परिवार को बचा सकती हैं। इसके बाद शिविर में मौजूद महिलाएं अपने–अपने सवाल पूछती हैं। इस दौरान चिकित्सक बारिश के दिनों में पेयजल की गुणवत्ता बनाए रखने से लेकर गर्मी में नवजात शिशुओं की देखभाल तक की जानकारी देते हैं। इस दौरान महिलाएं अपनी सेहत से जुड़ी समस्याओँ के बारे में भी पूछती हैं। चिकित्सक उन्हें घरेलू उपचार के बारे में जानकारी देते हैं। इस तरह से फूला के साथ मौजूद महिलाओं की सेहत संबंधी ट्रेनिंग भी साथ–साथ चलती है। इसके बाद यही महिलाएं गांव में जाकर दूसरी महिलाओं को सेहत के बारे में जानकारी देती हैं। खासतौर से बच्चों की देखभाल पर चर्चा होती है तो अपनी खुद की सेहत को कैसे बचाए रखा जाए, इस पर भी चर्चा होती है।

उत्तर प्रदेश का बांदा जिला बुंदेलखंड का ही एक पिछड़ा हुआ जिला हैं। इसी जिले के बड़ोखर खुर्द गांव में फूलादेवी रहती हैं। साधारण परिवार में जन्मीं फूला बचपन से ही परेशानियों से घिरी रहीं।

कम उम्र में ही पिता का देहांत हो गया। वह बताती हैं कि आज से करीब 50 साल पहले बुंदेलखंड में बेटियों के स्कूल जाने के बारे में सोचना भी पाप था। परिवार के लोग बच्चियों को स्कूल नहीं भेजते थे। फिर भी उन्होंने स्कूल जाने की जिद की। परिवार के कुछ लोगों ने विरोध किया, लेकिन उनके नाना ने उन्हें स्कूल जाने की इजाजत दे दी। फिर क्या था फूला को मानो बड़ी कामयाबी मिल गई हो। पांचवी में पढ़ने के बाद उनके नाना ने पढ़ाई छोडने़ की बात कही, लेकिन उन्होंने जिद करके आगे की पढ़ाई जारी रखी। आखिरकार ननिहाल में रहकर आठवीं कक्षा तक पढ़ाई की। फिर घरवालों ने शादी कर दी। ससुराल में पति की आर्थिक स्थिति भी अच्छी नहीं थी। फूला बताती हैं कि वह ससुराल आई तो खुशियां तमाम थी, लेकिन स्कूल छूटने का गम था।

फूलादेवी बताती हैं कि शादी के बाद वह पति के घर का कामकाज संभालने लगी। पति गांव के बड़े काश्तकारों के मवेशी चराते थे। बड़ी मुश्किल से खाने भर का जुगाड़ होता था। ऐसी स्थिति में अपना कारोबार शुरू करने की सोचना भी बेमानी था, लेकिन हम हमेशा यह सोचते कि आखिर कैसे जिंदगी की गाड़ी आगे बढ़ायी जाए। फिर धीरे–धीरे करके पैसे जोड़ना शुरू किया। करीब साल भर के जोड़–तोड़ के बाद एक भैंस खरीदने का जुगाड़ हो गया। फूलादेवी बताती हैं कि भैंस ने दूध देना शुरू किया तो उनके घर खुशहाली आ गई। पहले खरीदी गई भैंस का दूध बेचकर रुपये जोड़े और अगले साल एक और भैंस खरीद ली। दो भैंसों के दूध से उनके घर की गाड़ी चलने लगी। कुछ वक्त के बाद पांच बीघा जमीन भी खरीद ली। जमीन हो गई तो मानो किस्मत के ताले खुल गए हो। हालांकि जमीन पर सिंचाई का साधन न होने की वजह से ज्यादा अनाज नहीं होता था। फिर भी पूरा परिवार खेती में जुटा रहता था। धीरे–धीरे सिंचाई के साधन उपलब्ध हुए और खानेभर का अनाज आसानी से होने लगा।

ज्यादा दिन नहीं रह सकी खुशहाली

फूलादेवी बताती है कि उन्होंने जमीन खरीदने के बाद भैंस के दूध का कारोबार चालू रखा। खेती भी होने लगी। घर में लक्ष्मी की कृपा हो गई। बाल–बच्चों का भरा–पूरा परिवार है। जिंदगी की गाड़ी आसानी से आगे बढ़ी, तभी एक बड़ा झटका लगा। कुदरत ने शायद फूला के फलने–फूलने की मुद्दत काफी सीमित रखी थी। कुछ दिन बाद उसके लीवर में कैंसर हो गया। मुंबई के टाटा मेमोरियल में इलाज शुरू हुआ तो खेती की जमीन और भैंस भी बिक गई। अब फूला और उसका पति फिर पुराने हालात पर लौट आए, लेकिन जानलेवा मर्ज की गिरफ्त में आने के बाद भी फूला का हौंसला टूटा नहीं। उनके हौंसले की बदौलत जिंदगी बच गई। अब वह स्वस्थ हैं।

महिलाओं की जिंदगी संवारने की मुहिम

फूलादेवी बताती हैं कि अस्पताल में रहने के दौरान उनके मन में तमाम तरह के ख्याल आए। अस्पताल की नर्स और डाक्टर को घंटों देखती रहतीं। उनसे बातें करतीं। इस बीच तमाम नर्स उनसे घुलमिल गई। कुछ ने उन्हें तमाम घरेलू उपचार बताए तो कुछ ने यह भी समझाया कि जरा–सी सावधानी बरत कर महिलाएं तमाम रोगों से मुक्ति पा सकती हैं। इन बातों का उन पर गहरा असर हुआ। यहीं से उन्होंने संकल्प लिया कि घर लौटने के बाद गांव की महिलाओं को सेहत के प्रति जागरूक करेंगी। फूला बताती हैं कि अस्पताल में उन्होंने तमाम ऐसी महिलाओं के बारे में सुना, जो जानकारी न होने की वजह से अपनी सेहत का ख्याल नहीं रख पाई और असमय दम तोड़ दिया। इस दौरान कई नर्सों ने उन्हें समझाया कि गांव की महिलाओं की मौत शहरी महिलाओं की अपेक्षा ज्यादा होती है। जब इसका कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि गांव की महिलाएं दिन भर काम करती रहती हैं, लेकिन वह अपनी सेहत का ख्याल नहीं रख पाती हैं। गर्भावस्था के दौरान उचित देखभाल न होने की वजह से उन्हें खून की कमी हो जाती है। ऐसे में भी तमाम महिलाओं की मौत हो जाती है। जबकि तमाम महिलाएं स्तनपान कराने के दौरान पोषणयुक्त खाना न मिलने की वजह से कमजोर हो जाती हैं। कुपोषण की शिकार होने की वजह से उन्हें तमाम

बीमारियां लग जाती हैं। यह स्थिति तब भी होती है जब घर में खाने–पीने की चीजें मौजूद हों, लेकिन जानकारी के अभाव में गर्भवती व स्तनपान कराने वाली महिलाएं उन चीजों का सेवन नहीं कर पाती हैं, जिनकी उन्हें बेहद जरूरत होती है। इन सारी बातों को सुनने के बाद उन्होंने भगवान से प्रार्थना की कि यदि उन्हें कैंसर से मुक्ति मिल गई तो गांव लौटने के बाद महिलाओं को साक्षर करने के साथ ही उनको सेहत के प्रति भी जागरूक करेंगी। इसी वजह से गांव लौटने के बाद उन्होंने महिलाओं को पढ़ाना शुरू किया और फिर चिकित्सकों को बुलाकर उन्हें सेहत की ट्रेनिंग भी दिलानी शुरु की।

अनपढ़ महिलाओं को बनाया साक्षर

अपनी जिंदगी को उद्देश्यपरक बनाते हुए फूला ने गांव की महिलाओं की जिंदगी संवारने की मुहिम छेड़ी। बगैर किसी मदद या शौहरत के फूलादेवी गांव की अनपढ़ महिलाओं को पिछले करीब एक वर्ष से अपने घर में कक्षा लगाकर साक्षर बनाने के मिशन में जुटी हैं। करीब 35 महिलाओं ने अपने हस्ताक्षर सीखने के साथ ही पहाड़ा, गिनती भी सीख ली है। **इन महिलाओं में शिक्षा के प्रति गजब की ललक है। वे पहले सुबह अपने घर का कामकाज निबटाती हैं। फिर दोपहर में खाली होने के बाद पढ़ाई में जुट जाती हैं। इसी तरह शाम को भी फूला के घर के बाहर अशिक्षित महिलाओं की क्लास लगती है। इस क्लास में सिर्फ पढ़ाई ही नहीं होती है बल्कि समाज और खुद के विकास पर चर्चा भी होती है।** पढ़ाई के बाद भजन–कीर्तन का भी माहौल होता है। खास ज़ोर यह होता है कि परिवार को किस तरह से संवारा जाए। यदि किसी महिला के परिवार में कोई समस्या होती है तो वह क्लास खत्म करने के बाद आपस में बातचीत करती हैं और सभी मिल–बैठकर समस्या का समाधान ढूंढती हैं।

महिलाओं को बनाया स्वावलंबी

फूलादेवी ने 35 महिलाओं को जोड़कर महिला समूह बनाया है। यह सभी महिलाएं 20 रुपये प्रतिमाह जमा कर रही हैं। समूह के नाम बैंक में खाता खोलकर हर माह यह पैसा जमा किया जा रहा है। एक सुविधादाता ने इन महिलाओं के समूह को स्वर्ण जयंती समूह से जोड़ दिया है। नतीजे में समूह से जुड़ी 24 महिलाओं को भैंस पालन के लिए बैंक से 25–25 हजार रुपये मिल गए। दूसरे चरण में फिर बैंक ने 24 महिलाओं को भैंस पालन के लिए 24–24 हजार रुपये दिए। अब यह आधा सैंकड़ा महिलाएं भैंस पालकर अपनी गृहस्थी चला रही हैं। आत्मनिर्भर बनने वाली यह महिलाएं फूलादेवी को श्रेय देती हैं। इनका कहना है कि फूलादेवी की वजह से ही उनकी जिंदगी में खुशहाली के चटख रंग दिखने लगे हैं। वे भैंस पाल करके अपनी जीविका खुद चला रही हैं। अब उन्हें पैसे के लिए पति अथवा परिवार के अन्य कमाऊ पुरुषों का मुंह नहीं ताकना पड़ता है। बल्कि वे खुद अपने पास पैसे रखती हैं। भैंस के लिए चारा–दाना का इंतजाम होने के बाद जो पैसा बचता है, उसे जोड़कर रखने लगी हैं। इस तरह इस गांव में फूला की बदौलत तमाम महिलाएं कामकाजी बनती जा रही हैं। गांव में तरक्की की नई राह दिखने लगी है। देखादेखी दूसरे गांव की महिलाएं भी समूह बनाने लगी हैं।

दूसरों की जिंदगी संवारने का सुकून

फूला का मिशन अभी भी थमा नहीं है। उसका कहना है कि उसे बखूबी पता है कि वह ऐसे मर्ज की चपेट में है जो कभी भी उसे इस संसार से विदा कर सकता है, लेकिन इससे बेपरवाह होकर वह दूसरों का जीवन संवारने में लगी हुई हैं। फूला की तमन्ना है कि वह अपने गांव में 'संस्कृति कॉलेज' खोले, जिसमें युवा–युवतियों को भारतीय संस्कृति की जीवनशैली के प्रति प्रेरित करें। फूला को कैंसर के इलाज के लिए कोई जनप्रतिनिधि अपनी निधि से मदद देने की सुध नहीं ले रहा।

मौसम के हिसाब से बीमारियों पर चर्चा

फूलादेवी की क्लास में मौसम के हिसाब से बीमारियों पर चर्चा होती है। गर्मी के मौसम में डायरिया व लू से बचाव पर विस्तार से बातचीत की जाती है। इस दौरान आने वाले डॉक्टर लोगों को बताते हैं कि गर्मी में कुछ सावधानियां बरतने से रोगों से बचा जा सकता है। डिहाइड्रेशन के घरेलू उपचार भी बताए जाते हैं। इसके तहत एक लीटर पानी में एक चम्मच नमक तथा छह चम्मच शक्कर डालकर घोल बनाकर पीड़ित को देने की सलाह दी जाती है। बच्चों को भी उस घोल को प्रत्येक दस्त के बाद दो वर्ष से छोटे बच्चे को 50 से 100 मिली., 2 से 10 वर्ष के बच्चों को 100 से 200 मिली एवं 10 वर्ष से बड़े लोगों को 200 मिली. से अधिक देने की सलाह दी जाती है। इसी तरह सर्दी के मौसम में परिवार के बड़ों एवं बच्चों को सर्दी से बचाने के तरीके समझाए जाते हैं। साथ ही सर्दी में क्या–क्या खाना चाहिए और क्या नहीं खाना चाहिए, इस पर भी चर्चा होती है।

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं)
ई–मेलः sangeetayadav.shivam@gmail.com

आगामी अंक

अगस्त, 2015 – वित्तीय समावेशन की ओर

आईडीसीएफ से नागालैंड के आदिवासी बच्चों को मिली नई जिंदगी

नागालैंड के बेहद पिछड़े जिले मोन के आदिवासियों को कहां पता था कि जीवनरक्षक घोल (ओआरएस) दस्त से पीड़ित बच्चों की जान बचाने में कितना कारगर है। वे इस रोग का इलाज सदियों पुराने घरेलू तरीकों और पारंपरिक दवाओं से करते आ रहे थे। जिले में बड़ी तादाद में बच्चे दस्त के कारण शरीर में पानी की कमी हो जाने से मौत के मुंह में चले जाते थे। लेकिन पिछले साल चलाए गए सघन दस्त नियंत्रण पखवाड़े (आईडीसीएफ) ने दूरदराज के इस जिले के निवासियों को ओआरएस के महत्व के बारे में जागरूक बनाया। इसके अलावा जिले में बच्चों को पर्याप्त संख्या में ओआरएस के पैकेट मुहैया कराए गए ताकि दस्त होने की हालत में उनकी जिंदगी को बचाया जा सके।

देश में हर साल पांच वर्ष से कम उम्र के 2 लाख से ज्यादा बच्चों की दस्त से मौत हो जाती है। यानी इस उम्र वर्ग के बच्चों में से करीब 23 हर घंटे और साढ़े पांच सौ से अधिक बच्चे प्रतिदिन दस्त की भेंट चढ़ जाते हैं। दस्त से पीड़ित बच्चों की मौत शरीर में पानी की कमी की वजह से होती है। इनमें से ज्यादातर मौतों को ओआरएस पिलाने जैसे साधारण उपायों के जरिए रोका जा सकता है। स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने बच्चों में दस्त से होने वाली मौतों को पूरी तरह रोकने के मकसद से पिछले साल 28 जुलाई से 8 अगस्त तक समूचे देश में आईडीसीएफ कार्यक्रम चलाया। इस दौरान मान्यता प्राप्त सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं (आशा) ने पांच वर्ष से कम उम्र के लगभग 1 करोड़ 90 लाख बच्चों को ओआरएस के पैकेज बांटे। इन बच्चों को दस्त पीड़ितों की देखभाल के बारे में जानकारी भी दी गई। इस मुहिम की पहुंच के विस्तार के लिए इसमें स्थानीय और पंचायत स्तर के नेताओं तथा स्कूली बच्चों को भी शामिल किया गया। प्रयास यह था कि मुहिम को उन समुदायों तक भी पहुंचाया जाए जो आमतौर पर स्वास्थ्य सेवाओं के दायरे से बाहर रह जाते हैं।

यह घटना नागालैंड के उत्तरी जिले मोन में आईडीसीएफ से आए बदलाव के बारे में है। यह जिला उत्तर में अरुणाचल प्रदेश, पश्चिम में असम और पूर्व में म्यांमार से घिरा है। इसके दक्षिण–पश्चिम में लौंगलेंग और दक्षिण में त्यूएनसांग जिले हैं। मोन कस्बा इस जिले का मुख्यालय है। पंचायती राज मंत्रालय ने 2006 में मोन को देश के 250 सर्वाधिक पिछड़े जिलों में से एक घोषित किया था। मोन के कोन्याक आदिवासियों के राजा को आंग के नाम से जाना जाता है। आंग नामक संस्था सिर्फ कोन्याकों में है और यह पद आनुवांशिक होता है।

आईडीसीएफ के तहत मोन जिले में आदिवासी राजाओं, स्थानीय नेताओं और आम जनता से संपर्क का व्यापक अभियान चलाया गया। इन सबको दस्त से पीड़ित बच्चों को ओआरएस पिलाने के महत्व के बारे में बताया गया। उन्हें बताया गया कि दस्त से होने वाली मौतों को कुछ सरल उपायों से किस तरह आसानी से रोका जा सकता है। जिले का दौरा करने वाले स्वास्थ्य निगरानी दल के सदस्य यह जान कर हैरान रह गए कि स्थानीय नेताओं को दस्त से पीड़ित बच्चों की जान बचाने के लिए उन्हें ओआरएस पिलाने के सामान्य इलाज की जानकारी नहीं थी। निगरानी दल ने आईडीसीएफ के अवसर का लाभ उठाते हुए आदिवासी राजाओं को दस्त पीड़ित बच्चों की जान बचाने में ओआरएस के महत्व के बारे में बताया। आम जनता के अलावा इन राजाओं को भी ओआरएस के पैकेट दिए गए। म्यांमार गांव के राजा की 11 संतानें हैं लिहाजा उसे ओआरएस के इतने ही पैकेट दिए गए। लोनवा गांव के राजा को भी उसकी संतानों की संख्या के बराबर 17 ओआरएस पैकेट भेंट किए गए।

निगरानी दल को पता चला कि लोंगा गांव के किसी भी निवासी ने ओआरएस का नाम तक नहीं सुना था। इस गांव में दस्त पीड़ित बच्चों का इलाज घरेलू दवाओं और पारंपरिक तरीकों से ही किया जाता था। गांव के लोग यह जानकर हैरान रह गए कि ओआरएस जैसी मामूली–सी दवा दस्त पीड़ित बच्चे के लिए वाकई अमृत साबित हो सकती है।

मोन जिले में आईडीसीएफ में आदिवासी राजाओं और स्थानीय नेताओं को शामिल करने का प्रयोग काफी प्रभावी रहा। ये राजा और नेता आईडीसीएफ के संदेश को आम जनता तक पहुंचाने में काफी मददगार साबित हुए। आदिवासी राजाओं ने अपने समुदाय के बाकी लोगों को बताया कि ओआरएस के जरिए दस्त का प्रभावशाली ढंग से इलाज किया जा सकता है। इस तरह आम लोगों में दस्त से पीड़ित बच्चों के जीवन की रक्षा में ओआरएस के महत्व के बारे में जागरुकता बढ़ी। इससे मोन जिले में दस्त से मरने वाले बच्चों की संख्या में काफी गिरावट दर्ज की गई है।

नागालैंड के आदिवासी जिले मोन में आईडीसीएफ की कामयाबी इस बात का सबूत है कि अगर सरकारी कार्यक्रम पर्याप्त ईमानदारी और गंभीरता से चलाए जाएं तो इनसे समूचे देश और खासतौर से पिछड़े क्षेत्रों का कायाकल्प हो सकता है।

(पसूका से साभार)
अनुवाद : सुविधा कुमरा

आर. एन. आई./708/57
डाक–तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)–05/3164/2015–17
आई.एस.एस.एन. 0971–8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)–54/2015–17
2 जुलाई 2015 को प्रकाशित एवं 5–6 जुलाई 2015 को डाक द्वारा जारी

R.N.I./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2015-17
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-54/2015-17
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : डॉ. साधना राउत अपर महानिदेशक एवं प्रभारी, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू–30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया–II, नई दिल्ली–110020 : वरिष्ठ संपादक : कैलाश चन्द मीना